जिनभाषित

वीर निर्वाण सं. 2531

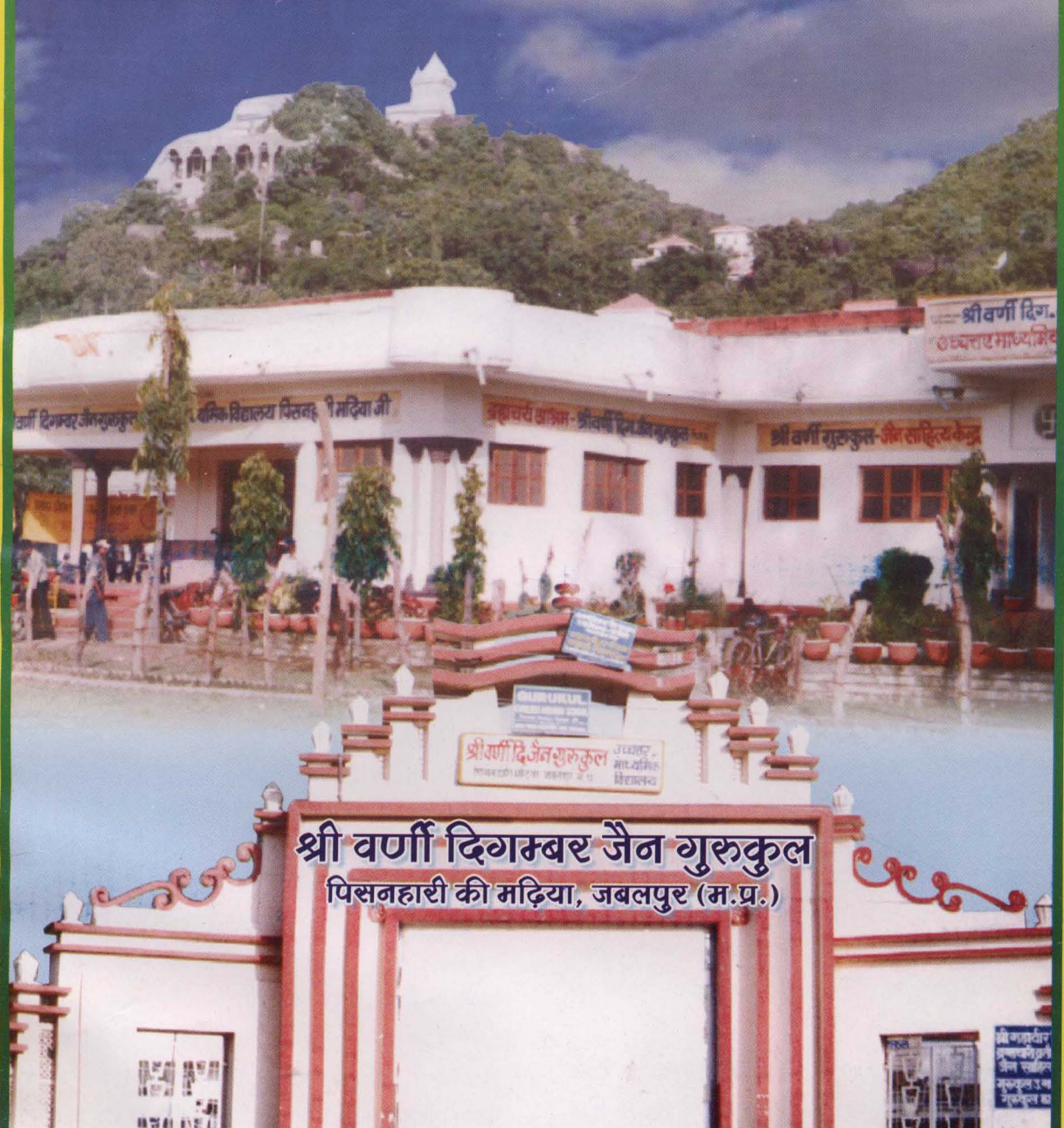

मार्गशीर्ष, वि.सं. 2061

दिसम्बर 2004

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

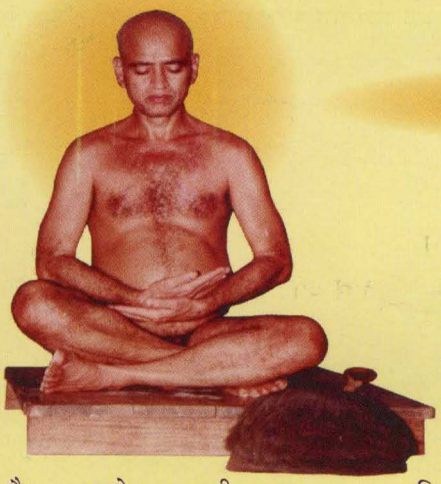

जन्म-मरण से परे

आचार्य श्री विद्यासागर जी

संत का नाम सुना था। आज उनके चारणों में आकर वह अबला रो रही है। अपने दुख की अभिव्यक्ति कर रही है। वह क्या माँग रही है, अभी यह भाव खुल नहीं पाया है। वह कह रही है कि जब आपने दिया था तो बीच में ही वापिस क्यों ले लिया, एक अबला के साथ यह तो अन्याय हुआ है। हम कुछ और नहीं चाहते, जैसा आपने दिया था वैसा ही वापिस कर दीजिये। क्योंकि हमने सुना है आप दयालु हैं। प्राणों की रक्षा करने वाले हैं। पतितों के उद्धारक हैं और इस तरह अपना दुख कहकर दुखी होकर वह अबला वहीं गिर पड़ी।

संत जी उसका दुख समझ रहे हैं उसका एक ही बेटा था। आज अकस्मात् वह मरण को प्राप्त हो गया है। यही दुख का कारण है। संत जी ने उसे सांत्वना दी, लेकिन अकेले शब्दों से शान्ति कहाँ मिलती है? वह कहने लगी कि आप तो हमारे बेटे को वापिस दिला दो। संत जी ने अब थोड़ा मुस्कुराकर कहा बिल्कुल ठीक है। पूर्ति हो जायेगी। बेटा मिल जायेगा। लेकिन सारा काम विधिवत् होगा। विधि को मत भूलो। सबके लिये जो रास्ता है वही तुम्हें भी बताता हूँ।

वह अबला तैयार हो गयी कि बताओ क्या करना है? अपने बेटे के लिए सब कुछ करने को तैयार हूँ। बेटा जीवित होना चाहिए। संत जी ने कहा ऐसा करो कि अपने अड़ोस-पड़ोस में जाकर कुछ सरसों के दाने लेकर आना। मैं सब ठीक कर दूँगा। इतना सुनते ही वह बुढ़िया अबला जाने को तैयार हो गयी तो संत जी ने रोककर कहा कि "सुनो, मैं भूला जा रहा था, एक शर्त है कि जिस घर से सरसों लेना वहाँ पूछ लेना कि तुम्हारे घर में कोई मरा तो नहीं है। जहाँ कोई कभी नहीं मरा हो वहाँ से सरसों ले आना बस।"

अबला ने सोचा कि दुनिया में एक मैं ही दुखी हूँ और शेष सारे के सारे सुखी हैं। मरण का दुख मुझे ही है। शेष किसी के यहाँ कोई नहीं मरा और वह जल्दी से पड़ोस में गयी और जाकर कहा कि संतजी ने कहा है कि तुम्हारा बेटा वापिस मिल जायेगा, लेकिन एक मुट्ठी सरसों के दाने लेकर आओ। तुम मुझे मुट्ठी भर सरसों दे दो और पड़ोसिन से सरसों लेकर वह जल्दी-जल्दी चार कदम भाग गई। पुनः वापिस लौटकर आयी और कहा कि पहले यह तो बताओ कि तुम्हारे घर में कोई मरा तो नहीं? तो पड़ोसिन बोली अभी फिलहाल कोई नहीं मरा, लेकिन तीन वर्ष पहले आज के दिन ही उनकी मृत्यु हो गई थी! अरे तब ऐसे सरसों तो ठीक नहीं, ऐसा सोचकर वह बुढ़िया सरसों वापिस करके दूसरी सहेली के पास चली जाती है।

वहाँ भी ऐसा ही हुआ। सरसों लेकर चार कदम बढ़ी कि गुरु के वचन याद आ गये कि जहाँ भी कोई मरण को प्राप्त न हुआ हो, वहाँ से सरसों लाना।

बंधुओ! मोक्षमार्ग में भी गुरुओं के वचन हमेशा-हमेशा काम में आते हैं। "उवयरणं जिणमग्गे लिंगं जहजादरूवमिदि भणिदं। गुरुवयणं पिय विणओ, सुत्तज्झाणं च निद्दिठं॥" आचार्य कुंदकुंद स्वामी ने हम लोगों के लिए, जो मोक्षमार्ग में आरूढ़ हैं, कहा है कि मोक्षमार्ग में चार बातों का ध्यान रखना, तो कोई तकलीफ नहीं होगी। पहली बात यथाजात रूप अर्थात् जन्म के समय जैसा बाहरी और भीतरी रूप रहता है, बाहर भी वस्त्र नहीं भीतर भी वस्त्र नहीं, वैसा ही निर्ग्रंथ निर्विकार रूप होना चाहिये।

पहले आठ दस साल के बच्चे निर्वस्त्र निर्विकार भाव से खेलते रहते थे। ऐसा सुनने में आता है कि ऐसे भी आचार्य हुए हैं, जिन्होंने बालक अवस्था से लेकर मुनि बनने तक वस्त्र पहना ही नहीं और मुनि बनने के उपरांत तो निर्ग्रंथ रहे ही। आचार्य जिनसेन स्वामी के बारे में ऐसा आता है। दूसरी बात गुरुवचन अर्थात् गुरु के वचनों का पालन करना। गुरुमंत्र का ध्यान रखना, शास्त्र तो समुद्र हैं। शास्त्र से ज्ञान बढ़ता है, लेकिन गुरु के वचन से ज्ञान के साथ अनुभव भी प्राप्त होता है। गुरु, शास्त्र का अध्ययन करके अपने पूर्व गुरु महाराज की अनुभूतियों को अपने जीवन में उतार करके और स्वयं की अनुभूतियों को उसमें मिलाकर देते हैं, जैसे- माँ, बच्चे को दूध में मिश्री घोलकर पिलाती है और कुछ गाती-बहलाती भी जाती है।

तीसरी बात है विनय, नम्रता, अभिमान का अभाव। यदि विनय गुण गुम गया तो ध्यान रखना, शास्त्र-ज्ञान भी कार्यकारी नहीं होगा। अंत में रखा है शास्त्र का अध्ययन, चिंतन, मनन करते रहना, जिससे उपयोग में स्थिरता बनी रहे, मन की चंचलता मिट जाये। तो गुरुओं के द्वारा कहे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गये वचन बड़े उपकारी हैं।

उस अबला बुढ़िया को सरसों मिलने से खुशी हो जाती, लेकिन जैसे ही मालूम पड़ता कि इस घर में भी गमी हो गई है, तो वह आगे बढ़ जाती। ऐसा करते-करते उस बुढ़िया को धीरे-धीरे आने लगी बात समझ में ''अनागत कब मरण में, अतीत कब विस्मरण में ढल चुका पता नहीं, स्वसंवेदन यही है,'' संसार में इसी स्वसंवेदन के अभाव में संसारी प्राणी भटक रहा है। यहाँ कोई अमर बनकर नहीं आया। ऐसा सोचते-सोचते वह बुढ़िया संतजी के पास लौट आयी।

संतजी ने कहा कि विलम्ब हो गया कोई बात नहीं। लाओ सरसों ले आयी। मैं तुम्हारा बेटा तुम्हें दे दूँगा। बुढ़िया बोली- संतजी आज तो हमारी आँखें खुल गयीं। आपकी दवाई तो सच्ची दवाई है! आपने हमारा मार्ग प्रशस्त कर दिया। आपका उपकार ही महान उपकार है। मेरा बेटा जहाँ भी होगा, वहाँ अकेला नहीं होगा क्योंकि अड़ौसी-पड़ौसी और भी हैं, जो पहले ही चले गये हैं! यह संसार है यहाँ यह आना-जाना तो निरंतर चलता रहता है।

आप लोग सॅनराइज कहते हैं। सॅनवर्थ कोई नहीं कहता और सॅनसेट सभी कहते हैं लेकिन सॅनडेथ कोई नहीं कहता, यह कितनी अच्छी बात है। यह हमें वस्तुस्थिति की ओर, वास्तविकता की ओर ले जाने में बहुत सहायक है। सॅनराइज अर्थात् सूर्य का उदय होना और सॅनसेट अर्थात् सूर्य का अस्त हो जाना। उदय होना, उगना कहा गया, उत्पन्न होना नहीं कहा गया। इसीप्रकार अस्त होना, डूबना कहा गया, समाप्त होना नहीं कहा गया। यही वास्तविकता है। आत्मा का जन्म नहीं होता और न ही मरण होता है। वह तो अजर-अमर है।

संसारी दशा में जीव और पुद्गल का अनादि संयोग है और पुद्गल तो पूरण-गलन स्वभाव वाला होता है। कभी मिल जाता है कभी बिखर जाता है। उसी को देखकर आत्मा के जन्म-मरण की बात कह दी जाती है। केवलज्ञान के अभाव में अज्ञानी संसारी प्राणी शरीर के जन्म होने पर हर्षित होता है और मरण में विषाद करता है और यही अज्ञानता संसार में भटकने का कारण बनती है।

आज यह बात वैज्ञानिक लोग भी स्वीकार करते हैं कि जो नहीं है, उसे उत्पन्न नहीं किया जा सकता और जो है उसका कभी नाश नहीं हो सकता उसका रूपांतरण अवश्य हो सकता है। रूपांतरण अर्थात् पर्याय का उत्पन्न होना या मिट जाना भले ही हो, लेकिन वस्तु का नाश नहीं होता। बंधुओ! जो पर्याय उत्पन्न हुई है उसका मरण अनिवार्य है किन्तु ऐसा मरण आप धारण कर लो कि जिसके बाद पुनः मरण न हो और ऐसी सिद्ध पर्याय को उत्पन्न कर लो जो अनंतकाल तक नाश को प्राप्त नहीं होती।

समग्र (चतुर्थ खण्ड) से साभार

ट्रेन में खाना ले जाने पर रोक लगेगी

गरीबों के मसीहा कहे जाने वाले रेल मंत्री लालू यादव की ट्रेन में गरीब यात्री अब सत्तू, लिट्टी या रोटी, दाल व सब्जी सफर के दौरान अपने साथ नहीं ले जा सकेंगे। केटरिंग नीति में बदलाव के बाद अब ट्रेनों में सफर के दौरान यात्रियों द्वारा खाने-पीने के सामान ले जाने पर प्रतिबन्ध लगाने की तैयारी की जा रही है। यात्रियों को सफर में भोजन कैटरर्स द्वारा ही उपलब्ध कराया जायेगा। इसका खर्च यात्रियों के टिकट में ही शामिल कर दिया जाएगा। सभी ट्रेनों में आरक्षित सीटों से संबंधित यह योजना अगले साल जनवरी में लागू होने की संभावना है।

कैटरिंग नीति में बदलाव के तहत रेल विभाग स्टेशनों पर चाय, नाश्ते आदि के स्टॉल लगाने की इजाजत उन्हीं लोगों को देगा जिनका सालाना टर्नओवर करोड़ों में होगा। जो वेन्डर इस शर्त को पूरा नहीं कर सकेगा, उसे स्टेशनों पर स्टॉल नहीं मिलेंगे। नई कैटरिंग नीति से रेलवे स्टेशन जल्द ही मल्टीनेशनल कम्पनियों के फूड प्लाजा और स्टॉलों से पट जायेंगे। ऐसा होने पर ए श्रेणी के स्टेशनों पर एक कप चाय पाँच से दस रुपये में मिलेगी। नाश्ते आदि की कीमत भी आसमान छूने लगेगी।

इस योजना के तहत आरक्षित बोगियों के सभी यात्रियों को भोजन कैटरर ही उपलब्ध करायेंगे और इसके लिए रकम यात्रियों के टिकट में शामिल कर ली जायेगी।

रेलवे अधिकारी तर्क दे रहे हैं कि ऐसा होने से ट्रेनों में नशीला पदार्थ खिलाकर यात्रियों को लूटने की घटना पर अंकुश लगेगा और ट्रेनों में सफाई व्यवस्था भी बेहतर होगी। वैसे, जो यात्री घर का भोजन ले जाना चाहेंगे, उन्हें इसके लिए रेलवे से अनुमति लेनी होगी। अहम् बात यह है कि रेलवे का कोई भी अधिकारी इस योजना के बारे में औपचारिक रुप से बोलने को तैयार नहीं है।

'अमर उजाला' से साभार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रजि. नं. UP/HIN/29933/24/1/2001-TC

डाक पंजीयन क्रं.-म.प्र./भोपाल/588/2003-05

दिसम्बर 2004 | मासिक | वर्ष 3, अङ्क 11

जिनभाषित

सम्पादक
प्रो. रतनचन्द्र जैन

◆

कार्यालय
ए/2, मानसरोवर, शाहपुरा
भोपाल 462039 (म.प्र.)
फोन नं. 0755-2424666

◆

सहयोगी सम्पादक
पं.मूलचन्द लुहाड़िया
(मदनगंज किशनगढ़)
पं. रतनलाल बैनाड़ा, आगरा
डॉ. शीतलचन्द्र जैन, जयपुर
डॉ.श्रेयांस कुमार जैन, बडौत
प्रो. वृषभ प्रसाद जैन, लखनऊ
डॉ. सुरेन्द्र जैन, 'भारती', बुरहानपुर

◆

शिरोमणि संरक्षक
श्री रतनलाल कँवरीलाल पाटनी
(मे.आर.के. मार्बल्स लि.)
किशनगढ़ (राज.)
श्री गणेश कुमार राणा, जयपुर

◆

प्रकाशक
सर्वोदय जैन विद्यापीठ
1/205, प्रोफेसर्स कालोनी,
आगरा-282002 (उ.प्र.)
फोन : 0562-2151428,
2152278

◆

सदस्यता शुल्क

शिरोमणि संरक्षक	5,00,000 रु.
परम संरक्षक	51,000 रु.
संरक्षक	5,000 रु.
आजीवन	500 रु.
वार्षिक	100 रु.
एक प्रति	10 रु.

सदस्यता शुल्क प्रकाशक को भेजें।

अन्तस्तत्त्व

पृष्ठ

◆ **प्रवचन**
- जन्म-मरण से परे : आ. श्री विद्यासागर जी — आवरण पृष्ठ 2

◆ **सम्पादकीय** : दूरदर्शन पर जिनशासन के चीरहरण का दोषी कौन? — 3

◆ **लेख**
- धर्म की अप्रभावना असह्य : पं. नरेन्द्र प्रकाश जैन — 9
- भट्टारक सम्मेलन : मूलचन्द लुहाड़िया — 11
- श्रावकाचारों में सम्यग्दर्शन का स्वरूप : सिद्धान्ताचार्य पं. हीरालाल जी शास्त्री — 14
- सुनने की कला : इंजी. धर्मचन्द बाझल्य — 18

◆ **प्राकृतिक चिकित्सा** : गर्भिणी के लिये उचित/अनुचित व्यवहार : डॉ. वन्दना जैन — 20
- श्री वर्णी दि. जैन गुरुकुल, पिसनहारी की मढ़िया, जबलपुर : ब्र. जिनेशकुमार, अधिष्ठाता — 26

◆ **जिज्ञासा- समाधान** : पं. रतनलाल बैनाड़ा — 22

◆ **बोध कथा**
- धन का मद : डॉ. जगदीश चन्द्र जैन — 8
- जीना इसी का नाम है : डॉ. सुरेन्द्र कुमार जैन — 24

◆ **कविता** : यशस्वी गुरु स्तुति : आर्यिका श्री मृदुमति जी — आवरण पृष्ठ 3

◆ **विशेष**
- कुण्डलपुर, दमोह (म.प्र.) को रेल लाइन से जोड़ने के लिए अनुरोध — 28
- जबलपुर-कोटा एक्सप्रेस का नाम दयोदय एक्सप्रेस हो — 29

◆ **समाचार** — 1, 13, 17,21, 25, 27 — 30-32

लेखक के विचारों से सम्पादक को सहमत होना आवश्यक नहीं है।
जिनभाषित से सम्बन्धित विवादों के लिए न्यायक्षेत्र भोपाल ही मान्य होगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्पादकीय

दूरदर्शन पर जिनशासन के चीरहरण का दोषी कौन?

'जिनभाषित' के गतांक में पं. मूलचन्द जी लुहाड़िया का सम्पादकीय ''साधुओं का शिथिलाचार'' प्रकाशित हुआ था, जिसमें उन्होंने दूरदर्शन के 'आज तक' चैनल पर 'जुर्म' धारावाहिक में 'साधु या शैतान' शीर्षक के अन्तर्गत आचार्य विरागसागर जी को एक अपराधी के रूप में प्रदर्शित किये जाने पर क्षोभ व्यक्त किया है। 'जिनभाषित' के प्रस्तुत अंक में भारतवर्षीय दिगम्बर जैन शास्त्रिपरिषद् के मान्य अध्यक्ष एवं 'जैनगजट' के सुप्रसिद्ध सम्पादक पं. नरेन्द्रप्रकाश जी का भी इसी विषय पर लेख छाप रहे हैं। दोनों विद्वानों ने उपर्युक्त घटना के लिए सम्पूर्ण जैन समाज को दोषी ठहराया है। पं. मूलचन्द जी लुहाड़िया ने 'जिनभाषित' (नवम्बर 2004) के सम्पादकीय में लिखा है-

''यदि हम गहराई से सोचें, तो दिगम्बर जैनधर्म की इस घोर कुप्रभावना के कारण हम स्वयं हैं। दिगम्बर जैन साधु के लिए हमारे शास्त्रों में स्थापित आचारसंहिता का अनेक आचार्यों एवं साधुओं के द्वारा दण्डनीय रूप से उल्लंघन किया गया है और हम उसका विरोध नहीं करके उसको प्रोत्साहित करने का अपराध करते हैं।.... विडम्बना यह है कि मुनियों के शिथिल आचरण की चर्चा करनेवालों को मुनिनिन्दक घोषित कर उनकी उपेक्षा की जाती है।''

'उपेक्षा की जाती है' ये शब्द तो अहिंसक व्यवहार का द्योतन करते हैं। सत्य यह है कि यदि कोई परम मुनिभक्त भी, मुनियों को नवधाभक्तिपूर्वक आहार देनेवाला भी, किसी आगमविरुद्ध आचरण करनेवाले मुनि के विरोध में कुछ कहता-लिखता है, तो उस पर 'मुनिनिन्दक' एवं 'सोनगढ़ी' होने का आरोप लगाकर उसे आतंकित किया जाता है और सभाएँ आयोजित कर उसकी निन्दा और बहिष्कार के प्रस्ताव पारित किये जाते हैं।

मान्य पं. नरेन्द्रप्रकाश जी ने यथार्थ शब्दों का प्रयोग किया है। वे लिखते हैं कि, ''यदि साधु के बारे में कुछ प्रतिकूल कह दिया जाए, तो उनके विवेकशून्य भक्त उनका(प्रतिकूल कहनेवालों का) मुण्डन करने को तैयार रहते हैं।'' (देखिए प्रस्तुत अंक में प्रकाशित लेख)।

वस्तुतः मुनियों और आर्यिकाओं के शिथिलाचार को दुराचार की हद तक पहुँचाने और उसे टीवी-प्रसारण द्वारा दुनिया को दिखाने एवं दुनिया में जिनशासन की नाक कटाने की नौबत लाने के लिए ऐसे ही श्रावक पहले नम्बर पर जिम्मेवार हैं। और 'मुनि कैसउ होय हमें का हानि' तथा 'ढकी-मुँदी रहने दो भैया, चलो-चलन दो ढला-चला' की नीति अपनाकर शिथिलाचार पर मौन रहनेवाले श्रावक दूसरे नम्बर पर जिम्मेवार हैं। इस प्रकार के व्यवहार की दुःखद घटना ब्रह्मचारिणी क्रान्ति जैन ने 12.12.03 को श्री आर.के. बंसल नोटरी तहसील-मवाना के द्वारा प्रमाणित अपने शपथपत्र में वर्णित की है। वे लिखती हैं, ''मैंने विरागसागर के कुकृत्यों की अनेकों बार शिकायत समाज के कर्णधारों एवं समाज की संस्थाओं से की, लेकिन उल्टा संस्थाएँ एवं समाज के कर्णधार हमें ही चुप रहने के लिए विवश करते रहे।''

पं. नरेन्द्रप्रकाश जी ने 'जैनगजट' (18 नवम्बर 2004) के संपादकीय में उपर्युक्त टीवी-घटना के विषय में लिखा है, ''किसी दुर्घटना पर स्यापा करने से कुछ नहीं होगा। हमें मामले की तह तक जाकर असली सच को सामने लाने का साहस दिखाना होगा।'' मेरा भी यही मत है।

यह मामूली बात नहीं है कि ब्र. इन्द्रकुमार पोटी अपने गुरु आचार्य श्री विरागसागर जी से अलग होकर लगभग चार वर्षों से उन पर गंभीर आरोप लगाते आ रहे हैं। उन्हें विश्वास नहीं था कि गुरुमूढ़ता की हद तक पहुँचे हुए मुनिभक्त उनकी बात गंभीरता से सुनेंगे। इसलिए उन्होंने गुरुमूढ़ मुनिभक्तों के हृदय को धक्का पहुँचानेवाले उपाय अपनाये, शॉक ट्रीटमेन्ट का तरीका चुना। उन्होंने आरोपों का वर्णन करनेवाले रंगीन पोस्टर और कई पृष्ठोंवाले पत्र छपवाये, उन्हें मन्दिरों में चिपकवाया तथा समाज के नेताओं, मुनिसंघों और विद्वानों के पास भेजा। उनमें अनुरोध

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किया गया कि आरोपों की जाँचकर अपराधी गुरु को मुनिपद से च्युत किया जाय। उन्होंने एक के बाद एक कई पत्र भेजे, किन्तु बहुत दिनों तक किसी ने भी जाँचपड़ताल करने की कोशिश नहीं की। केवल यह हुआ कि उन पत्रों को पढ़ने-सुनने मात्र से मुनिभक्तों में दो गुट बन गये। एक ने जाँचपड़ताल किये बिना ही, उक्त गुरु को दोषी मान लिया और दूसरे गुट ने भी परीक्षा किये बिना ही आँखे बन्द कर उन्हें निर्दोष घोषित कर दिया। जातीय व्यामोह के कारण भी श्रावक विभाजित होकर पक्ष-विपक्ष में खड़े हो गये।

बहुत दिनों बाद भारतवर्षीय दि. जैन शास्त्रिपरिषद की प्रेरणा से एक ग्यारह-सदस्यीय जाँचसमिति गठित की गयी और उसने आचार्य विरागसागर जी एवं उनके संघस्थ त्यागी, व्रती एवं साधुओं से लिये गये बयानों के आधार पर निर्णय दिया कि आचार्य विरागसागर जी पर लगाये गये आरोप असत्य हैं। (देखिए, 'जैनगजट', 23 अक्टूबर 2003)। किन्तु यह जाँच अपूर्ण थी, क्योंकि इसमें उन आर्यिकाओं के बयान नहीं लिये गये थे, जिन्होंने 'आज तक' टीवी चैनल के 'जुर्म' नामक धारावाहिक में अपने गुरु पर आरोप लगाये और जिनमें से एक (विकासश्री) ने यह स्वीकार किया कि उसके गुरु ने उसके साथ दुष्कर्म किया था। (देखिए, 'विरागवाणी', नवम्बर 2004, में प्रकाशित 'कारंजा(लाड) से निन्दा प्रस्ताव', पृ. 38)।

यद्यपि उक्त आर्यिका के द्वारा टीवी पर स्वीकार किये जाने मात्र से यह सिद्ध नहीं होता कि उसके साथ गुरु के द्वारा दुष्कर्म किया गया है, क्योंकि यह सिद्ध करने के लिए उसे कई प्रश्नों के जवाब देने होंगे, उदाहरणार्थ, उसने आर्यिका जैसे महान् पद पर आसीन रहते हुए अपने साथ दुष्कर्म क्यों होने दिया? दुष्कर्म घटित होने लायक परिस्थितियों के निर्मित होने में सहयोग क्यों दिया? अर्थात् वह अपने गुरु के पास एकान्त में क्यों गयी और उसने गुरु के अश्लील प्रस्ताव क्यों सुनें और उन्हें गोपनीय क्यों रखा? यदि गुरु ने उसके साथ बलात्कार करने की कोशिश की, तो उसने शोर क्यों नहीं मचाया? दुष्कर्म हो चुकने के बाद उसने समाज के उत्तरदायी पुरुषों से तुरन्त शिकायत क्यों नहीं की? अपने माता-पिता को खबर क्यों नहीं भिजवाई? दो या तीन वर्ष तक चुप क्यों बैठी रही? व्यभिचार से अपवित्र हो जाने के बाद भी वह आर्यिका के पवित्र और पूजनीय पद पर क्यों आसीन रही? किसी अन्य योग्य आचार्य से छेदप्रायश्चित्त लेकर पुनः दीक्षा ग्रहण क्यों नहीं की? गुरु के द्वारा शीलभंग किये जाने का उसके पास लोगों को विश्वास दिलाने योग्य क्या प्रमाण है? यदि इन प्रश्नों का उत्तर वह न दे सकी, तो उसके द्वारा लगाया गया आरोप किसी षड्यंत्र का हिस्सा भी सिद्ध हो सकता है।

तथापि यह भी सत्य है कि कोई पतित से पतित स्त्री भी सार्वजनिकरूप से यह स्वीकार नहीं करती कि 'मैं व्यभिचारिणी' हूँ। अतः जब आर्यिका जैसे परम पवित्र पद पर आसीन रहते हुए भी कोई स्त्री अपने साथ गुरु के द्वारा व्यभिचार किया जाना स्वीकार करती है, तो गुरु पर सन्देह के लिए अवसर अवश्य प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त मुझे एक ऐसी फाइल देखने को मिली है, जिसमें विद्याश्री और विधाश्री इन दो आर्यिकाओं के, क्रान्ति जैन, रजनी जैन बीना, अंजना जैन, रजनी जैन (द्वितीय) और सन्ध्या जैन, इन पाँच ब्रह्मचारिणियों के तथा एलक विमुक्तसागर, क्षुल्लक विशंकसागर और क्षुल्लक नित्यानन्दसागर के शपथपत्र संगृहीत हैं। इन सभी ने अपना पता 'मार्फत-प्रदीप जैन 17/30, छिली ईंट रोड, घटिया आजमखाँ, पुलिस चौकी के पास आगरा' दिया है। शपथ पत्र-महामंत्री, जिनसंस्कृति रक्षा एवं संवर्धक समिति आगरा (उप्र) के समक्ष प्रस्तुत किये गये हैं। सभी के द्वारा दिए गए शपथपूर्वक बयान का प्रमाणीकरण दस-दस रुपये के स्टाम्प पेपरों पर दस-दस रुपये के नोटोरियल टिकिट के साथ नोटरी आर.के. बंसल (मवाना-तहसील, आर.एन. 01 (17) 02 गवर्नमेन्ट आफ यू.पी.) ने दि. 12.12.03 को किया है। सभी के गवाह श्रीवल्लभ एडवोकेट (आर.एन.यू.पी. 689/91) मवाना (मेरठ) हैं। इन सभी शपथपत्रों में आचार्य विरागसागर पर उनके उपर्युक्त शिष्य-शिष्याओं के द्वारा उसी प्रकार के आरोप लगाये गये हैं जैसे 'आज तक' टीवी के 'साधु या शैतान' नामक 'जुर्म' धारावाहिक में विधिश्री और विकासश्री आर्यिकाओं ने लगाये हैं। इन शपथपत्रों से उक्त गुरु पर सन्देह की गुंजाइश और दृढ़ हो जाती है। इसलिए सन्देह के निवारण हेतु निष्पक्ष एवं गहन सामाजिक जाँच की आवश्यकता उपस्थित होती है।

इसके लिए एक ऐसी उच्चस्तरीय एवं अखिल भारतीय स्तर की जाँचसमिति गठित की जानी चाहिए, जिसमें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संपूर्ण भारत के निष्पक्ष समाज-शिरोमणियों और विद्वानों का प्रतिनिधित्व हो। किन्तु उसमें ऐसे व्यक्तियों को शामिल न किया जाय, जिनकी छवि लीपापोती करने की बन गयी है या जो उक्त गुरु को 'येन केन प्रकारेण' अपराधी सिद्ध करना चाहते हों। तथा यह धारणा बनाकर जाँच शुरु न की जाय कि पूरी तरह गुरु ही दुष्कर्म के दोषी हैं और स्वयं उन आर्यिकाओं एवं ब्रह्मचारिणियों का इसमें कोई दोष नहीं है, जिन्होंने अपने साथ गुरु के द्वारा व्यभिचार किये जाने का आरोप लगाया है या यह कहा है कि उनके सामने व्यभिचार हुआ है। क्योंकि यदि दुष्कर्म हुआ है, तो किन्हीं नाबालिग, अबोध बालिकाओं के साथ नहीं हुआ है, अपितु सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्र और उपचार-महाव्रतों के पालन की दीक्षा लेनेवाली, तत्त्वार्थसूत्र और मूलाचार का स्वाध्याय करनेवाली तथा श्रावकों को मोक्षमार्ग का उपदेश देनेवाली आर्यिका जैसे गुरुणी के पवित्र पद पर आसीन वयस्क और समझदार साध्वियों के साथ हुआ है। अत: अपने शीलभंग में इनका उतना ही हाथ है, जितना इनके गुरु का, क्योंकि इनके शीलभंग का अवसर इसलिए आया कि इन्होंने आर्यिकाओं और ब्रह्मचारिणियों के लिए निर्धारित आचारसंहिता का पालन नहीं किया, जिसका पालन इन्हें प्राणों की कीमत पर भी करना चाहिए था। उदाहरणार्थ-

1. आर्यिका विद्याश्री और विधाश्री ने अपने शपथपत्रों में लिखा है कि 'यह विरागसागर हमारे धर्म में स्थापित मानदण्डों का आचरण नहीं करते हैं।' किन्तु उन पर आरोप लगानेवाली आर्यिकाओं और ब्रह्मचारिणियों ने स्वयं धर्म में स्थापित मानदंडों के अनुसार आचरण नहीं किया। मूलाचार में नियम है कि किसी भी आर्यिका या ब्रह्मचारिणी को एकांत में बैठे हुए गुरु के पास अकेले नहीं जाना चाहिए। (मूलाचार गाथा 177, 192)। किन्तु उक्त आर्यिकाओं और ब्रह्मचारिणियों ने इस धर्म का पालन नहीं किया। वे अकेले जाती रहीं और एकान्त में घंटों बैठती रहीं। कोई भी आगमनिष्ठ गुरु एकांत में किसी आर्यिका या किसी स्त्री को नहीं बुला सकता। जो बुलाता है, उसका अभिप्राय दूषित है, यह तुरंत समझ लेना चाहिए। अत: उसकी आज्ञा का पालन नहीं करना चाहिए, यह शास्त्राज्ञा है।

2. 'तत्त्वार्थसूत्र' में कहा गया है कि सत्यव्रत के पालन के लिए भय का त्याग आवश्यक है: 'क्रोधलोभभीरुत्वहास्यप्रत्याख्यानानुवीचिभाषणं च पञ्च।' सप्तभयों का त्याग सम्यग्दृष्टि की पहचान है। मेरी भावना में पं. जुगलकिशोर जी मुख्तार ने कहा है-

कोई बुरा कहे या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे,
लाखों बरसों तक जीऊँ या मृत्यु आज ही आ जावे।
अथवा कोई कैसा ही भय या लालच देने आवे,
तो भी न्यायमार्ग से मेरा कभी न पद डिगने पावे॥

किन्तु ये आर्यिकाएँ और ब्रह्मचारिणियाँ गुरु के द्वारा प्रताड़ित किये जाने और जान से मरवा देने की धमकी से भयभीत होकर उनसे शीलभंग करवाती रहीं, और दूसरों का शीलभंग होते देखती रहीं, जैसा कि उन्होंने अपने गुरु पर आरोप लगाया है। (देखिए, आर्यिका विद्याश्री का शपथपत्र अनुच्छेद-4)।

3.आगम में आज्ञा दी गयी है कि धर्म से विचलित होते हुए स्वयं का तथा अन्य साधर्मी का उपदेश आदि के द्वारा स्थितीकरण किया जाना चाहिए। किंतु इन आर्यिकाओं और ब्रह्मचारिणियों ने, न अपना स्थितीकरण किया, न अपने गुरु का, उल्टे गुरु के पास एकान्त में जाकर उनके लिए स्त्रीपरीषह उत्पन्न करती रहीं।

4. बहुत बड़ा पाप हो जाने पर आगम में छेद प्रायश्चित्त का विधान किया गया है। प्रायश्चित्त पूरा होने के बाद गुरु पुन: दीक्षा देते हैं। इन आर्यिकाओं ने किसी अन्य आचार्य के पास जाकर छेदप्रायश्चित्तपूर्वक पुन: दीक्षा ग्रहण नहीं की। पाप से पतित रहते हुए भी आर्यिका जैसे पवित्र और वंदनायोग्य पद पर आसीन रहकर श्रावकों की श्रद्धा और भक्ति का शोषण करती रहीं और कर रही हैं।

5. 'ज्ञानार्णव' में सत्यमहाव्रत का स्वरूप बतलाते हुए कहा गया है कि "जब धर्म का नाश होने लगे, आचार के ध्वस्त होने की नौबत आ जाय और समीचीन सिद्धान्त संकट में पड़ जाय, तब इनके सम्यक् स्वरूप का प्रकाशन करने के लिए ज्ञानियों को स्वयं ही मुँह खोलना चाहिए"(9/15)। किंतु वरिष्ठ आर्यिकाएँ (उन्हीं के कथनानुसार)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपनी आँखों से अपने गुरु तथा कनिष्ठ आर्यिकाओं और ब्रह्मचारिणियों को पतन के गर्त में जाते हुए देखती रहीं, पर संघ से निकाल दिये जाने पर दर-दर की ठोकरें खाने के भय से अथवा जान से मार दिये जाने के डर से इस पतन के खिलाफ मुँह खोलने का साहस न कर सकीं। इस प्रकार उन्होंने सत्यमहाव्रत का भयंकर उल्लंघन किया है।

6. आचार्य कुन्दकुन्द ने कहा है 'असंजदं ण वंदे' अर्थात् संयमभ्रष्ट मुनियों की वंदना नहीं करनी चाहिए। अतः जब उक्त आर्यिकाओं को यह पता चल गया था कि उनका गुरु संयमभ्रष्ट है, तभी उन्हें उसका साथ छोड़ देना चाहिए था, किन्तु वे प्रताड़ना और मृत्यु के भय से अथवा भविष्य के अनिश्चित हो जाने के डर से बहुत दिनों तक ऐसा करने का साहस न जुटा सकीं और एक संयमभ्रष्ट (उनके अनुसार) पुरुष को गुरु के रूप में पूजती रहीं।

7. उन्होंने अपने गुरु पर मंत्रतंत्र द्वारा उन्हें वश में करने का आरोप लगाया है, किन्तु यदि गुरु मंत्रतंत्र जानते, तो अपने प्रबल विरोधी ब्रह्मचारी पोटी को वे कभी का वश में कर लेते और यदि ब्रह्मचारी पोटी को मंत्रतंत्र सिद्ध होता, तो वे भी अपने दुश्मन गुरु से अभी तक हिसाब-किताब बराबर कर चुके होते। आज गुरु अपनी अपकीर्ति को मंत्रतंत्र से नहीं बचा पा रहे हैं, तो उन्होंने किसी आर्यिका को मंत्रतंत्र के प्रयोग से वश में किया होगा या परेशान किया होगा, यह कहना-मानना अपनी इच्छा से किये गये पाप पर परदा डालना है।

यदि आर्यिकाएँ और ब्रह्मचारिणियाँ अपने धर्म पर दृढ़ रहतीं, तो गुरु की मजाल नहीं थी कि वे उनके शरीर को हाथ भी लगा सकते, गुरु को लेने के देने पड़ जाते और वे चरित्रभ्रष्ट होने से भी बच जाते। सीता जी रावण की अधीनता में कई दिनों तक रहीं, लेकिन उनकी चारित्रिक दृढ़ता के कारण रावण उनका बाल भी बाँका नहीं कर सका।

इस प्रकार इन आर्यिकाओं और ब्रह्मचारिणियों ने अपने गुरु पर जिन पापों के आरोप लगाये हैं, यदि वे सत्य हैं, तो उनमें इनकी भी पूरी-पूरी सहभागिता है। कहावत भी है कि ताली एक हाथ से नहीं बजती। किन्तु गुरु का अपराध सबसे ज्यादा है, क्योंकि वे आचार्यपद पर आसीन हैं। अपने शिष्य-शिष्याओं को आचार का पालन तो उन्हें ही कराना होता है। किन्तु जब वे ही आचारभ्रष्ट हों, तो उनके द्वारा शिष्य-शिष्याओं को आचारपालन की प्रेरणा मिलना असंभव है। कमजोर शिष्यों का स्वभाव शिथिलाचार की ओर जाने का होता है। आचार्य के भ्रष्ट होने से ऐसे शिष्यों का शिथिलाचार की ओर गमन निर्बाध हो जाता है। और जब रक्षक ही भक्षक बन जाय, तब कमजोर शिष्य-शिष्याओं का पतन सुनिश्चित है। किन्तु उक्त आर्यिकाओं के गुरु का आचारभ्रष्ट होना अभी प्रमाणित नहीं हुआ है। उसका निर्णय जाँचसमिति करेगी।

लेकिन उन आर्यिकाओं का अपराध प्रमाणित हो चुका है, जिन्होंने अपने गुरु पर आरोपित अपराधों को जैनसमाज के गण्यमान्य पुरुषों के समक्ष प्रकट न कर, टीवी-धारावाहिक में प्रकट किया है। इससे उन्होंने अपने गुरु को सारी दुनिया में बदनाम करने का उद्देश्य तो पूरा कर लिया, किन्तु स्वयं को भी भ्रष्ट आर्यिकाओं के रूप में बदनाम कर लिया है। और उन्होंने न केवल एक जैनमुनि के और स्वयं के मुँह पर सारी दुनिया के सामने कालिख पोती है, बल्कि समस्त दिगम्बर जैन मुनियों और आर्यिकाओं तथा निर्मल जिनशासन को एक घिनौने रूप में दुनिया के सामने पेश किया है। यह जिनशासन के प्रति उनका अक्षम्य अपराध है। यह अवश्य है कि इसके पीछे उनकी अपनी बुद्धि नहीं थी, अपितु ब्रह्मचारी पोटी का दिमाग था, अतः वे भी उतने ही दोषी हैं, जितनी उक्त आर्यिकाएँ। किन्तु इस शर्मनाक घटना के लिए ब्रह्मचारी पोटी से अधिक संपूर्ण जैनसमाज दोषी है। इसका खुलासा पोटी द्वारा समाज के गण्यमान्य पुरुषों के पास प्रेषित उपान्त्यपत्र के निम्नलिखित अंशों से हो जाता है-

"मैंने बहुत नम्र निवेदन किये, प्रार्थना की, विनय की, फिर चेतावनी भी दी। पर जहाँ सत्य को इस तरह अनदेखा किया जाता हो, जैसे कि देदीप्यमानसूर्य को देख उल्लू आँखें मींच लेता है, वहाँ अब निवेदन और चेतावनी से काम चलनेवाला नहीं है, वहाँ सिंह की गर्जनाद की, तूफान की आवश्यकता है। **अब ऐसा तूफान आयेगा कि सब मुनियों और समाज व धर्म के ठेकेदारों का भारत की सड़कों और गलियों पर निकलना अति कठिन हो जायेगा, जैन धर्म के श्रमणों और श्रावकों की कायरता की कहानी सड़कों पर गन्दी गालियों के साथ सुनने को मिलेगी, तब अक्ल आयेगी।**"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

''यह उपान्त पत्र है, अन्तिम निवेदन है, अन्तिम चेतावनी भी है। इसके बाद जो अन्तिम पत्र होगा, उसे मैं आपके लिए नहीं भेजूँगा। वो पत्र मिलेगा आपको एक दैनिक अखबार से, **एक न्यूज चैनल से** और भारतवर्ष में बसनेवाले एक-एक बच्चे से। अन्तिम पत्र में सप्रमाण खुलासा होगा, 400 पृष्ठ की एक रिपोर्ट होगी **और जैनसमाज के मुख पर कालिख होगी।** ''

''अभी समय है, रोक सकते हो, तो रोक लो उठने वाले तूफान को, सँभाल सको तो सँभाल लो जिनधर्म को, शीघ्र-अतिशीघ्र निर्णय करो, अन्यथा आनेवाले समय में **कोई भी दिन जैनधर्म के इतिहास का सबसे काला दिवस होगा।**''

हस्ताक्षर

ब्र. इन्द्रकुमार जैन (पोटी भइया)

01.03.2003

इन पंक्तियों से ब्र. इन्द्रकुमार पोटी के हृदय का तीव्र क्षोभ और आक्रोश प्रकट होता है, और ज्ञात होता है कि उन्होंने एक दिगम्बराचार्य के चारित्रिक पतन और उससे होनेवाली धार्मिक विकृतियों की शिकायत बड़े-बड़े पत्र लिखकर समाज के नेताओं से बार-बार की और यथोचित कदम उठाने का आग्रह किया, किन्तु किसी के भी कान पर जूँ नहीं रेंगी, सबने इसे एक उन्मत्तप्रलाप कहकर टाल दिया। इससे हताश होकर उन्होंने जिनशासन के मुख पर कालिख पोतनेवाले इस टीवी-काण्ड को अंजाम दिया, जिसकी उन्होंने पहले ही चेतावनी दे दी थी। इससे सिद्ध है कि इस काण्ड का दोषी सम्पूर्ण जैनसमाज है।

इस काण्ड से सभी श्रावकों को यह शिक्षा लेनी चाहिए कि मुनियों, आर्यिकाओं, एलक-क्षुल्लक और ब्रह्मचारी-ब्रह्मचारिणियों के मामूली से मामूली भी शिथिलाचार की उपेक्षा न की जाय। उसका संगठित होकर सामूहिक रूप से विरोध किया जाय। उपेक्षा करने पर शिथिलाचार बढ़ते-बढ़ते दुराचार की हद तक पहुँच जाता है और वह जिनशासन के मुँह पर कालिख पोत देता है। ऐसी घटनाएँ घट चुकी हैं और घट रही हैं। कुछ का संकेत 'जिनभाषित' के पूर्वांक(नवम्बर 2004) के सम्पादकीय में पं. मूलचंद जी लुहाड़िया ने किया है। 'संस्कारसागर' के जुलाई 2004 के अंक में भी ऐसा एक उदाहरण है। यह शिक्षा भी लेनी चाहिए कि यदि कोई जिनभक्त किसी मुनि या आर्यिका के दुश्चरित्र की ओर समाज का ध्यान आकृष्ट करता है, तो उस पर तुरन्त ध्यान दिया जाय और फौरन जाँचपड़ताल की जाय। यदि दुश्चरित्र सत्य सिद्ध होता है तो उस (दुश्चरित्र) मुनि या आर्यिका को शास्त्रोक्त प्रायश्चित्त ग्रहण करने के लिए बाध्य किया जाय। यदि इसके लिए वह तैयार नहीं होता या नहीं होती, तो उसे पदच्युत कर दिया जाय और यह खबर जैन समाचारपत्रों में प्रकाशित कर सर्वत्र पहुँचा दी जाय। यदि ऐसा नहीं किया गया और मुनियों, आर्यिकाओं आदि के शिथिलाचार और दुराचार की ओर ध्यान आकृष्ट करनेवालों को 'मुनिनिन्दक' और 'सोनगढ़ी' कहकर उपेक्षित, आतंकित, निन्दित और बहिष्कृत किया जाता रहा, तो ब्र. इन्द्रकुमार पोटी जैसे व्यक्ति भी उत्पन्न होते रहेंगे, टीवी पर बयान देनेवाली आर्यिकाओं जैसी आर्यिकायें भी पैदा होती रहेंगी और टीवी-काण्ड भी दुहराये जाते रहेंगे, जिनसे जिनशासन के मुख पर कालिख भी सदा पुतती रहेगी।

अपने उपान्त्य पत्र में दी गई चेतावनी के अनुसार ब्रह्मचारी पोटी ने टीवी-काण्ड के द्वारा जैन धर्म के इतिहास का कालादिवस लाकर दिखा दिया है, अब इससे भी बड़ा कालादिवस लाकर न दिखा दें, जैसा कि अभी-अभी एक जैनेतर धर्मगुरु के जीवन में ला दिया गया है, इसके लिए सम्पूर्ण जैनसमाज को सतर्क रहना है।

अत: जिनशासनभक्तों से मेरा आग्रह है कि शीघ्र ही एक अखिलभारतीय स्तर की उच्चस्तरीय जाँचसमिति गठित की जाय और गहन-छानबीन के द्वारा पुष्ट प्रमाणों को उपलब्ध कर दूध का दूध पानी का पानी किया जाय। यदि आर्यिकाओं और ब्र.पोटी के द्वारा टीवी के माध्यम से अपने गुरु पर लगाये गये आरोप सत्य सिद्ध होते हैं, तो उक्त गुरु को किसी अन्य आचार्य के सान्निध्य में दीक्षाछेद का प्रायश्चित्त लेकर पुन: मुनिदीक्षा लेने के लिए बाध्य किया जाय और उनके संघ की आर्यिकाओं को किसी अन्य आर्यिकासंघ से और मुनियों को किसी अन्य मुनिसंघ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से संलग्न करने की व्यवस्था की जाय। यदि उक्त गुरु इसके लिए तैयार न हों, तो उन्हें मुनिपद से च्युत कर दिया जाय और सभी जैन पत्र-पत्रिकाओं में पदच्युति की खबर प्रकाशित कर दी जाय, ताकि भारत का सम्पूर्ण जैनसमाज इस निर्णय से अवगत हो जाय और उनकी वन्दना-भक्ति बन्द कर दे।

इसके विपरीत यदि उन पर लगााये गये आरोप मिथ्या सिद्ध होते हैं, तो आरोप लगानेवाली आर्यिकाओं और ब्र.पोटी को भी किसी आचार्य के द्वारा ऐसा ही दंड दिलाया जाय अथवा उनके उक्त पदों की मान्यता समाप्त कर दी जाय तथा सभी जैन समाचारपत्रों में यह समाचार छपवा दिया जाय कि आचार्य विरागसागर जी पर उनके शिष्य-शिष्याओं द्वारा लगाये गये आरोप मिथ्या हैं। इसके अतिरिक्त 'आज तक' टीवी चैनल पर कानूनी कार्यवाही की जाय और उसे आचार्य विरागसागर जी की निर्दोषता दर्शानेवाला नया समाचार बनाकर टीवी पर दिखाने के लिए बाध्य किया जाय।

इसके अतिरिक्त सम्पूर्ण समाज मिलकर यह निर्णय भी करे कि किसी भी मुनिसंघ के साथ आर्यिकाओं और ब्रह्मचारिणियों को न रहने दिया जाय। आर्यिकाएँ आचार्यों से दीक्षा प्राप्त करें, उन्हीं से सम्बद्ध रहें, पर उनके अलग संघ बनें और मुनिसंघों से अलग रहकर धर्मसाधना करें। जब आवश्यक मार्गदर्शन प्राप्त करना हो, तभी अल्प समय के लिए आचार्य के पास आवें किन्तु तब भी उनकी वसतिका मुनियों की वसतिका से बहुत दूर रहे। इससे उपर्युक्त प्रकार के पतन का अवसर ही नहीं रहेगा।

रतनचन्द्र जैन

धन का मद

डॉ. जगदीश चन्द्र जैन

बहुत दिनों की बात है। कोई बूढ़ा गृहस्थ अपनी जवान स्त्री और पुत्र के साथ रहता था ।

एक दिन गृहस्थ ने सोचा- मेरी स्त्री जवान है। सम्भव है, मेरे मरने के बाद वह किसी अन्य पुरुष से विवाह कर ले, मेरी सब धन-दौलत खर्च कर डाले और मेरा पुत्र धन से वंचित रह जाय। अतएव मैं क्यों न धन को धरती में गाड़ कर रख दूँ ? यह सोचकर गृहस्थ नन्द नामक अपने दास को लेकर जंगल में गया। अपने धन को उसने धरती में गाड़ दिया। तत्पश्चात् नन्द से कहा 'तात नन्द! देख, मेरे मरने के बाद मेरे पुत्र को यह धन दिखा देना।'

कुछ दिन बाद गृहस्थ मर गया। एक दिन उस की स्त्री ने अपने बेटे से कहा- 'तात, तुम्हारे पिता नन्द को बताकर जंगल में तुम्हारे लिए धन गाड़ गये हैं । उसे निकालकर कुटुम्ब का पालन कर।' कुमार ने नन्द को बुलाकर कहा- 'मामा! तुम्हें मालूम है, मेरे पिता ने धन कहाँ गाड़ कर रखा है?'

'हाँ, स्वामिन् मुझे मालूम है। धन जंगल में है।'

'चलो, उसे खोदकर ले आयें।'

यह कहकर दोनों कुदाली और टोकरी लेकर जंगल में पहुँचे।

कुमार-मामा! धन कहाँ गड़ा हुआ है?

नन्द धन के गड्ढे के ऊपर खड़ा होकर अभिमान से बोला- 'अरे दासीपुत्र चेटक! तेरा धन यहाँ कहाँ से आया?'

कुमार ने उस बात पर कोई ध्यान न दिया। वह घर लौट आया।

दो-तीन दिन बाद कुमार फिर नन्द को लेकर वहाँ गया।

नन्द फिर पहले दिन की तरह गालियाँ बकने लगा।

कुमार ने नन्द से फिर कुछ नहीं कहा। वह घर आकर सोचने लगा- यह दास हर बार कहता है कि अब की बार धन का पता बताऊँगा, लेकिन न जाने क्यों जंगल में पहुँचते ही मुझे गालियाँ देने लगता है?

कुमार का एक मित्र था। उसने उसके पास जाकर सब बातें कहीं।

मित्र ने कहा- 'तात! चिन्ता न करो। देखो, जिस जगह खड़ा होकर वह गाली बकता है, उसी जगह धन गड़ा हुआ है। तुम वहाँ कुदाली से खोदकर धन निकाल लेना।' कुमार ने ऐसा ही किया।

'प्राचीन भारत की श्रेष्ठ कहानियाँ'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धर्म की अप्रभावना असह्य
अपकीर्ति से बचाव का एक ही उपाय

पं. नरेन्द्र प्रकाश जैन
सम्पादक : 'जैन गजट'

गत 6 एवं 7 नवम्बर को दूरदर्शन के 'आज तक' चैनल पर एक दिगम्बराचार्य की जो छवि प्रस्तुत हुई, उसके बारे में जानकर हमें वेदना तो बहुत हुई, परन्तु आश्चर्य बिल्कुल नहीं हुआ। हमारी वेदना का कारण है-निर्मल जिनशासन की भारी अप्रभावना या अपकीर्ति तथा दिनोंदिन बढ़ती अन्धश्रद्धा के चलते समाज के शीर्ष-नेतृत्व एवं जनसाधारण के द्वारा उसे अत्यन्त उपेक्षा के साथ ग्रहण किया जाना। पिछले एक दशक में कुछ साधुओं में स्वेच्छाचार और शिथिलाचार बढ़ा ही है। कहीं-कहीं उसने अनाचार की सीमा का स्पर्श किया है। इधर साधुओं की संख्या में तो आशातीत वृद्धि हुई है, किन्तु गुणवत्ता में भारी कमी आई है। पहले के संघों में सैकड़ों की संख्या में साधु होते थे और कोई भी साधु संघके अनुशासन का उल्लंघन नहीं करता था। सभी साधु अपने आचार्य की आज्ञा के धागे से बँधे रहते थे। परन्तु आज तो दस-बीस साधुओं को सँभालना भी एक आचार्य के लिए कठिन हो गया है। साधुसंघ में बढ़ती जा रही अनुशासनहीनता और गिरावट का कवरेज मीडिया द्वारा न हो, आज के संचारप्रधान युग में यह कैसे सम्भव है? हम, तो अब बदनामी के भी अभ्यस्त हो गये हैं, इसलिए ऐसी किसी भी घटना से किसी को कोई आश्चर्य नहीं होता।

शीलसम्बन्धी प्रकरण तो बहुत ही संवेदनशील होते हैं। इनके विषय में किसी अन्तिम नतीजे पर पहुँचना एक दुष्कर कार्य है। कोई संस्था या समिति इसकी जाँच भी करना चाहे, तो उसे अपने कदम बहुत फूँक-फूँककर रखने होते हैं। आरोप लगानेवालों के विपरीत-राय देने पर समिति के मुखर सदस्यों को उनके अपशब्द सुनने पड़ते हैं। यदि साधु के बारे में कुछ प्रतिकूल कह दिया जाए, तो उनके विवेकशून्य भक्त उनका मुण्डन करने को तैयार रहते हैं। इस स्थिति में सही जाँच या तो हो ही नहीं पाती और यदि हो भी जाए, तो श्रद्धालु भक्तों (?) की भीड़ उसे मानने को तैयार नहीं होती। अखिल भारतीय स्तर की संस्थाओं की स्थिति भी यह है कि वे शोर तो बहुत करती हैं, किन्तु किसी निर्णय को क्रियान्वित करने या कराने की तत्परता या संकल्पबद्धता का उनमें अभाव होता है।

एक नीति-वाक्य है- "**अकीर्तिः परमल्पापि याति वृद्धिमुपेक्षिता**" अर्थात् थोड़ी-सी भी अपकीर्ति उपेक्षा करने पर बढ़ जाती है। पिछले दोहजार वर्षों में किसी साधु पर लांछन लगाने की हिम्मत कोई नहीं कर पाता था, पर आज सीना तानकर कुछ लोग यह कार्य कर रहे हैं। इसके लिए हम सबकी उपेक्षा ही जिम्मेदार है। समाज और धर्म की अपकीर्ति के लिए कोई एक पक्ष नहीं, आरोपक और आरोपी दोनों ही जिम्मेदार हैं, परन्तु हम इसे नजरअन्दाज कर रहे हैं। किसी भी समस्या की अनदेखी करने या फिर उसकी लीपापोती करने की प्रवृत्ति उपेक्षा की ही उपज है। इन दिनों भी समाज में निन्दा या भर्त्सना के प्रस्ताव पारित करने की उतावली और होड़ तो दिख रही है, किन्तु कोई भी संस्था ठोस या सकारात्मक कदम उठाने का साहस नहीं जुटा पा रही है। वर्तमान प्रकरण में हम एक पक्ष की फूहड़ भाषा और उसके पीछे छिपी रंजिश को देख-सुनकर तो तिलमिला रहे हैं, किन्तु दूसरे पक्ष की कमियों और कमजोरियों की चर्चा करना भी पसन्द नहीं करते हैं। हमने तो देखा है कि जिस साधु पर जितनी बड़ी मात्रा में लांछन लगते हैं, वह उतना ही ज्यादा महिमा-मण्डित होने लगता है। आरोपित होना भी साधु के लिए आजकल 'स्टेटस सिम्बल' बन गया है। लगता है कि कलियुग में चारित्र-चक्रवर्ती कहलाने की शायद यही कसौटी बची है। दुर्भाग्य हैं यह समाज का!

विद्वान् से लोग अपेक्षा तो बहुत करते हैं, परन्तु अन्त तक उनका साथ देनेवालों का हमेशा टोटा रहता है। '**चढ़ जा बेटा सूली पर, भली करेंगे राम**' की कहावत का अनुभव तीन-तीन मुकदमे झेल चुकने के बाद हमें अच्छी तरह से हो गया है। वैसे भी विद्वान् कोई सुझाव ही दे सकता है, उसके क्रियान्वयन की शक्ति तो समाज या श्रीमन्तों द्वारा पोषित संस्थाओं के ही पास है। विद्वानों के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भी अपने संगठन तो हैं, परन्तु वे सभी समाज की उपेक्षा के शिकार हैं। फण्ड की कमी की समस्या हमेशा उनके सामने रहती है। सभा-सम्मेलन करने के लिए उन्हें भी किसी साधु की कृपा का ही सहारा रहता है।

विद्यमान प्रकरण के समाधान की दिशा में हमें एक पौराणिक प्रसंग याद आ रहा है। पद्मपुराण में हम सबने पढ़ा है कि सीताजी जब लंका से अयोध्या वापिस आ गईं, तब सोचा गया था कि उनके दुर्दिनों का अब अन्त हो गया है। तभी एक घटना घट गई। एक स्त्री, पति-गृह से पति की अनुमति लिए बिना, प्रसंगवश, किसी निकट-सम्बन्धी के यहाँ चली गई। दो-चार दिन बाद जब उसका लौटना हुआ, तो उसके पति ने यह कहकर उसके लिए घर के दरवाजे बन्द कर लिए कि वह कोई राम थोड़े ही है, जिसने रावण के यहाँ रहने पर भी सीता को घर में रख लिया। यह बात एक कान से दूसरे कान तक फैलते-फैलते श्री राम के कानों तक भी जा पहुँची। उन्हें सीता के शील या सतीत्व में कोई शंका नहीं थी, परन्तु राजधर्म और राजनीति की शुचिता या मर्यादा की रक्षा के लिए सीता के परित्याग का कठोर निर्णय लेने में उन्हें कोई हिचक नहीं हुई। उनके आदेशानुसार सेनापति कृतान्तवक्र, तीर्थयात्रा के बहाने रथ पर बिठाकर, सीता को बियावान् वन में छोड़ आये। श्री राम को लोकापवाद से डर लगता था, किन्तु आज के साधु को धर्मापवाद से डर क्यों नहीं लगता-यह विचारणीय है।

हमारा तो यह स्पष्ट मत है कि धर्म के अपवाद एवं साधु-संघ की अपकीर्ति से बचने के लिए अब आर्यिका माताओं का स्वतंत्र संघ बनाने का समय आ गया है। पूज्य आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज के संघ की प्रशस्त परम्परा का अनुकरण ही धर्म को बदनामी से बचा सकता है। पूज्य आर्यिका सुपार्श्वमती एवं विशुद्धमती माताओं के स्वतन्त्र एवं निर्मल-निष्कलंक छविवाले आर्यिका-संघों के आदर्श भी हमारे सामने हैं। आज से कुछ वर्ष पहले धर्मापवाद के ऐसे ही एक अप्रिय प्रसंग के उपस्थित होने पर सिरसागंज (उ.प्र.) की महती सभा में देश के कोने-कोने से समागत भक्तजन-समूह ने इसी आशय का प्रस्ताव पारित किया था, परन्तु कोई भी उस पर अमल करने के लिए तैयार नहीं है। जिन पर आरोपों की बौछार हो रही है, वे भी नहीं। लगता है कि कुछ को छीछालेदर कराने में ही मजा आता है। आज ऋषि, मुनि, यति और अनगार साधुओं के चतुर्विध-संघ की आदर्श-परम्परा को पुनर्जीवित करने की आवश्यकता है।

श्रीराम से अलग होकर जैसे सीता जी के व्यक्तित्व में निखार आता गया, वैसे ही स्वतन्त्र-विहार की अनुमति मिलने पर आर्यिकाओं का यश भी बहुत बढ़ेगा। उनके यश-विस्तार से दीक्षा-गुरु के सुयश में भी वृद्धि होगी ही। वर्तमान की अपयशभरी चकल्लस से आज आर्यिकाओं का जीवन कुण्ठाग्रस्त होकर रह गया है। घुटन में जीना भी कोई जीना है क्या? अपने आत्मसम्मान की रक्षा के लिए अब आर्यिकामाताओं को स्वयं भी इस ओर पहल करनी चाहिए।

साधु-संघ और धर्म की निर्मल कीर्ति पर दाग न लगे-यह देखने का दायित्व मुख्यतः हमारे पूज्य आचार्यों का है। यदि धर्म के अपयश का कोई भी कारण उपस्थित हो, तो किसी के न-पूछने पर भी आचार्यों को संघ और समाज का मार्गदर्शन करना चाहिए। कोई साधु या श्रावक भले ही निर्दोष भी हो, किन्तु यदि उसके कारण से निर्मल जिनशासन की अपकीर्ति होती हो, तो उसे भी प्रायश्चित्त लेना चाहिए। एक नीतिपरक श्लोक को उद्धृत कर हम अपनी चर्चा को विराम दे रहे हैं-

ब्रह्मचारी गृहस्थश्च वानप्रस्थश्च भिक्षुकः।
दण्डस्यैव भयादेते मनुष्याः वर्त्मनि स्थिताः॥

अर्थात् ब्रह्मचारी, गृहस्थ (नागरिक), वानप्रस्थ और सन्यासी, ये सभी दण्ड के भय से ही अपने-अपने मार्ग में स्थित रहते हैं। **आचार्यों के मौन रहने पर समाज के कर्णधारों एवं प्रबुद्धजनों का यह कर्तव्य है कि वे धर्म की अप्रभावना को सहन न करें तथा उसकी रोकथाम के लिए कठोर कदम उठायें।** यदि ऐसा नहीं हुआ, तो अपयश की यह श्रृंखला अमरबेल की तरह फूलेगी-फलेगी और फैलेगी। वर्तमान प्रकरण हमारे लिए एक चुनौती भी है और चेतावनी भी।

अध्यक्ष - श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन शास्त्रि परिषद
सम्पर्कसूत्र - 104, नई बस्ती, फिरोजाबाद (उ.प्र.)

परिणामों को सदा अपने दोषों को छानने में लगाना चाहिये दूसरों के दोषों को देखने में नहीं।

आचार्य श्री विद्यासागर जी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भट्टारक सम्मेलन

मूलचन्द लुहाड़िया

जब यह जानकारी प्राप्त हुई कि आचार्य देवनंदि जी महराज के सान्निध्य में उनकी जन्म-जयंती के अवसर पर जटवाड़ा में एक भट्टारक सम्मेलन आयोजित किया जा रहा है, तब मैंने यह समझा था कि सम्मेलन में भट्टारक संस्था की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर उसके क्रमशः ह्रासोन्मुखी गति से गमन करते हुए वर्तमान स्वरूप तक की यात्रा पर, भट्टारक पद के आगमानुकूल स्वरूप-निर्धारण आदि महत्वपूर्ण बिंदुओं पर ठोस चर्चाएँ होंगी। किंतु सम्मेलन के बारे में समाचार-पत्रों में विवरण पढ़कर अत्यंत खेद हुआ। यह बताया गया कि भट्टारक सम्मेलन की प्रेरणा आचार्य श्री देवनंदि जी महाराज से प्राप्त हुई। कहा गया कि वर्तमान में भट्टारकों पर कुछ संतों एवं सम्पादकों द्वारा सतत् प्रहार किये जा रहे हैं, उनको देखते हुए यह सम्मेलन आयोजित किया गया है। श्री निर्मल कुमार सेठी ने कहा कि मेरी चर्चा इस संबंध में एक प्रमुख आचार्य से हुई और मैंने उनसे निवेदन किया कि परंपरा से पिच्छी भट्टारकों के पास हैं, इसका विरोध क्यों कर रहे हैं? उक्त कथनों से भट्टारक-सम्मेलन के आयोजन की पृष्ठभूमि एवं उद्देश्य समझ में आता है। इन्दौर चातुर्मास के समय पू. आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज ने कुछ स्वाध्यायशील श्रावकों द्वारा भट्टारकों द्वारा रखी जा रही पिच्छी के बारे में प्रश्न उठाये जाने पर कहा था कि वस्त्र एवं आरंभ-परिग्रह सहित मठाधीश भट्टारकों को आगम के अनुसार पिच्छी नहीं रखना चाहिए। पू. आचार्यश्री ने यह भी कहा था कि चरणानुयोग के ग्रंथों के अनुसार भट्टारकों के पद का निर्धारण भी होना चाहिए और उन्हें उस पद के अनुरूप चारित्र का पालन करना चाहिए।

उसके बाद प्रसिद्ध इतिहास-विद्वान् स्व. नाथूराम जी प्रेमी द्वारा लिखित और दक्षिण भारत जैन सभा द्वारा मराठी में प्रकाशित ''भट्टारक'' पुस्तक का हिंदी में ''पुनः प्रकाशन'' करा कर उसको समाज के विद्वानों और श्रीमानों को इस निवेदन के साथ भेजा गया कि भट्टारकों के संबंध में वे पुस्तक के साथ भेजी गई प्रश्नावली में उल्लिखित बिंदुओं पर अपनी मूल्यवान सम्मति भिजवाएँ। ऐसा प्रतीत होता है कि उक्त दो घटनाओं को भट्टारकों का विरोध समझकर उसके विरोध में यह भट्टारक-सम्मेलन आयोजित किया गया है।

पहली बात, तो यह है कि उक्त दोनों घटनाओं में भट्टारकों के स्वरूप-निर्धारण और आरंभ-परिग्रह एवं वस्त्र-सहित पिच्छी नहीं रखी जाने की आगमसम्मत बात कही गई है। इसमें भट्टारकों का विरोध कहाँ है? स्वरूप-निर्धारण सभी दृष्टियों से भट्टारकों के हित में है। योग्यता के अभाव में पिच्छी रखना भी उनके हित में है। आगमानुकूल आचरण-व्यवस्था सभी के हित में है। विरोध का हव्वा खड़ा करके ऐसा भयानक चित्र उपस्थित करने का प्रयास किया जा रहा है जिससे समाज का ध्यान आगम की आचरण-व्यवस्था की मूल बात पर नहीं जा सके। महासभाध्यक्ष श्री सेठी जी ने कहा कि धर्म के दो तरीके हैं, एक आगम और दूसरा परम्परा। बिलकुल ठीक बात कही सेठी जी ने। प्रकारांतर से उन्होंने इस सत्य को स्वीकार कर लिया कि भट्टारक-संस्था आगम-सम्मत, तो नहीं है, किन्तु 600-700 वर्षों से चली आ रही परंपरा है। जो परंपरा आगम-विरुद्ध है, वह चाहे कितनी भी पुरानी हो, मान्य नहीं हो सकती और उसको बदल देना ही धर्म है। आचार्य शांतिसागर जी ने श्रावकों द्वारा मिथ्या देवी-देवताओं को पूजने की पुरानी परंपराओं को, तोड़ा है और साधुओं के शिथिलाचार की परंपराओं के विरुद्ध आवाज उठाई है। आचार्य कुंदकुंद ने साधुओं के शिथिलाचार की परंपराओं की जोरदार भर्त्सना की है। मिथ्यादर्शन, मिथ्या चारित्र की अनादिकालीन परंपराओं को, तोड़कर सम्यग्दर्शन और सम्यक्चारित्र को प्राप्त करने का उपदेश जिनवाणी हमें दे रही है। श्री सेठी जी ने मिथ्या परंपराओं के संरक्षण के प्रति अति उत्साहित होकर सम्मेलन में कहा है कि हम इस (भट्टारक) परंपरा पर कुठाराघात किसी कीमत पर बर्दाश्त नहीं करेंगे। आपने, तो सदैव उन शिथिलाचारी साधुओं को अपना पूरा संरक्षण देकर ही इस महान वीतराग धर्म का संरक्षण करने का भ्रम पाला है। फिर भट्टारकों के आगमानुकूल स्वरूप-निर्धारण की बात आप कैसे बर्दाश्त कर सकते हैं?

इतिहास का यह तथ्य निर्विवादरूप से मान्य है कि परिस्थितिवश दिगम्बर मुनि पहले कभी-कभी अधोवस्त्र अथवा लंगोट और फिर धीरे-धीरे पूरे वस्त्र धारण करने लगे। उस समय नग्न दिगम्बर मुनियों का अभाव-सा हो गया और इन वस्त्रधारी भट्टारकों को ही मुनि के समान मान्यता प्राप्त होती रही। भट्टारक समय बीतने के साथ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रुपये-पैसे भेंट में लेने लगे और एक स्थान पर मठ बनाकर रहने लगे। धीरे-धीरे संयम ने परिग्रहयुक्त सत्ता का रूप ले लिया। परिग्रह-पिशाच ने भट्टारकों के संयम को हर लिया।

वस्त्र एवं अन्य परिग्रह ग्रहण कर लेने के बाद भी भट्टारकों ने अपने आपको श्रावकों के द्वारा मुनि के समान ही आदर कराना जारी रखा। भट्टारक दीक्षा के समय नग्न होकर दीक्षा लेते और उसके तुरंत बाद श्रावकों की प्रार्थना पर वस्त्र धारण कर लेते। यद्यपि पूर्व में भट्टारक शब्द का प्रयोग दिगम्बर मुनियों/आचार्यों के लिए होता था, किंतु उनके शिष्य प्रशिष्यों के वस्त्र-धारण कर लेने के बाद भी उनके लिए भट्टारक नाम का ही प्रयोग किया जाता रहा। दिगम्बर भट्टारकों की पिच्छी उनके वस्त्रधारी शिष्यों के हाथ में भी बनी रही।

इस प्रकार भट्टारकों के हाथ में यह पिच्छी गुणवत्ता के आधार पर अथवा आगम के आधार पर नहीं, अपितु परंपरा के आधार रहती रही। एक समय जब दिगम्बर मुनियों का पूरे देश में लगभग अभाव-सा हो गया था, तब सम्पूर्ण भारत में भट्टारकों की गद्दियाँ स्थापित हो गई थीं। उत्तर भारत में विद्वानों का युग आया, जिन्होंने श्रावकों को भी स्वाध्यायशील बनाया। आगम के आलोक में उन्होंने सच्चे देव-शास्त्र-गुरु का स्वरूप समझा और पाया कि मुनि व श्रावक के आचार-ग्रंथों में भट्टारक का कोई पद नहीं है। फलस्वरूप उत्तर भारत में धीरे-धीरे भट्टारक नहीं रहे, किंतु दक्षिण भारत में श्रावकों के आगम-ज्ञान के अभाव में भट्टारकों का वर्चस्व बना रहा। पूर्वकाल में भट्टारक शब्द का प्रयोग उत्कृष्ट मुनि के लिए होता था, किंतु आज के परिग्रहधारी मठाधीश भट्टारकों का रूप स्पष्टतः आगम-विरुद्ध है। विरोध भट्टारकों का नहीं है, उनके आगम-विरुद्ध भेष का विरोध है।

दिगम्बर जैनधर्म के महान प्रभावक आचार्य कुंदकुंददेव ने, जिनको हम भगवान महावीर एवं गौतमगणधर के पश्चात् मंगलरूप में स्मरण करते हैं, मयूर-पिच्छी को साधु का चिन्ह या लिंग बताया है और घोषणा की है कि दिगम्बर मुनि, आर्यिका और उत्कृष्ट श्रावक (ऐलक, क्षुल्लक) ये तीन ही लिंग हैं, जैन दर्शन में चौथा लिंग नहीं है। मूलाचार में स्वयंपतित मयूर-पंखों से निर्मित पिच्छी को योगियों का चिन्ह बताया है। भावप्राभृत की टीका में कहा गया है कि पिच्छीसहित निर्मल नग्नरूप जिनमुद्रा होती है। वर्तमान भट्टारक न मुनि हैं और न ही ऐलक -क्षुल्लक हैं। अतः, आगम की आज्ञा के अनुसार वे पिच्छी रखने के अधिकारी नहीं हैं। भट्टारकों को पिच्छी रखना चाहिए या नहीं, इसका निर्णय हमें आगम में ढूँढ़ना चाहिये, किंतु हमने इस प्रश्न के हल के लिए राजनीति का रंग देकर आगम को गौण कर परंपरा और अधिकार का तर्क प्रस्तुत करते हुए आतंक और आंदोलन का सहारा लेने के लिए सम्मेलन आयोजित किया है। स्वयं भट्टारकों ने अहंकारभरी भाषा में पिच्छी पर अपना 700 वर्ष पुराना अधिकार जताते हुए कहा है कि उन्हें पिच्छी के लिए किसी के सर्टिफिकिट की आवश्कता नहीं है। मेरा, तो नम्र निवेदन है कि इस दिगम्बर जैनधर्म पर कृपा कीजिए और इस धर्म को, जिसका जीवन ही अपरिग्रहत्व और संयम है, संयम की उपेक्षा कर निर्जीव मत बनाइए। पिच्छी संयमोपकरण है तथा संयम का चिन्ह है। परंपरा के आधार पर इस पर अधिकार जता कर इसकी मर्यादा और गरिमा की हत्या मत कीजिए। यदि मात्र परंपरा के आधार पर ही कोई मान्यता धर्म की सीमा में आ जाती हो, तो श्वेताम्बर सम्प्रदाय, तारण सम्प्रदाय भी मान्य ठहरेंगे। आज भट्टारक-सम्मेलन में परंपरा के आधार पर पिच्छी रखने के अधिकार की बात कही जा रही है, उसी प्रकार कल शिथिलाचारी साधु भी अपना सम्मेलन आयोजित कर परंपरा के आधार पर शिथिलाचार को मान्य ठहराए जाने की बात कहेंगे। शिथिलाचारी-साधु-परंपरा, तो भट्टारक-परंपरा से भी प्राचीन है। आचार्य कुंदकुंद स्वामी के ग्रंथ 'अष्टपाहुड' में मुनियों के शिथिलाचार के विरुद्ध उपलब्ध विस्तृत वर्णन यह सिद्ध करता है कि उस समय भी मुनियों में शिथिलाचार व्याप्त था। यह दिगम्बर जैन समाज का दुर्भाग्य है कि आगम-विरुद्ध-परंपराओं के संरक्षण के लिए हमने आगम की उपेक्षा कर सम्मेलन और आंदोलन का सहारा लेने की राजनीति को अपनाना प्रारंभ किया है। दिगम्बर जैन समाज ने मुनि और श्रावकों के चारित्रिक दोषों को दूर करने के लिए, तो समय-समय पर सभा सम्मेलनों में चिंता व्यक्त की है, परंतु दिगम्बर जैन धर्म के इतिहास में संभवतः यह पहला सम्मेलन है, जिसमें आगम-विरुद्ध परंपराओं के समर्थन में धर्म की व्यवस्था के स्थान पर परंपरा के आधार पर अधिकार का तर्क उठाया गया है।

यह कहा गया है कि भट्टारकों ने जैन-संस्कृति की रक्षा और इस आधार पर सभी भट्टारकों को संस्कृति-विषयक पदवियाँ प्रदान की गई हैं। वस्तुतः पूर्वकालीन दिगम्बर भट्टारकों द्वारा, तो अवश्य साहित्य-सृजन के रूप में संस्कृति-संरक्षण हुआ था, किंतु पश्चाद्वर्ती भट्टारकों ने वस्त्र आदि परिग्रह धारणकर अपरिग्रह एवं वीतरागता-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आधारित दिगम्बर जैन-संस्कृति को क्षति ही पहुँचाई है। इन्होंने श्रावकों को आगम-अध्ययन से वंचित रखते हुए मंत्र-तंत्र आदि बाह्य क्रियाकांड में उलझाए रखा और इस प्रकार जैन-तत्त्व-ज्ञान के प्रचार को भी अवरुद्ध ही किया है। वास्तव में पश्चाद्वर्ती भट्टारकों द्वारा दिगम्बर जैन संस्कृति की महनीय हानि हुई है। दिगम्बर जैनमंदिरों व तीर्थ क्षेत्रों की भट्टारकों द्वारा की गई सुरक्षा की बात कदाचिद् स्वीकार की जाय, तो क्या धर्मायतनों की सुरक्षा करनेवालों को पिच्छी रखकर मुनिवत् अपने को जगदगुरु के रूप में प्रस्तुत करने का अधिकार प्राप्त हो जाता है? उन्होंने जो कुछ अच्छा किया, वह प्रशंसनीय है। अनेक श्रावकों ने समय-समय पर भी अनेक मूर्तियों, मंदिरों और तीर्थ क्षेत्रों का निर्माण किया और उनकी सुरक्षा भी की, तो क्या कभी उनको समाज द्वारा पिच्छी रखने का अधिकार देकर मुनिवत् आदर किया गया?

यह अकाट्य ऐतिहासिक सत्य है कि वर्तमान भट्टारकों का भेष और चर्या सर्वथा आगमविरुद्ध है। उनका आगम के अनुसार पद-निर्धारण होकर उनका यथोचित आदर सत्कार किया जाय, इसके लिए दिगम्बर जैन आचार्य, विद्वान् एवं प्रमुख श्रेष्ठिगण मिलबैठकर आगमसम्मत निर्णय लेवें, तो यह धर्म की प्रभावना का महान् कार्य होगा।

भट्टारकों के वर्तमान पद, भेष और पिच्छी के समर्थक बंधुओं और स्वयं भट्टारक महोदयों से मेरा विनम्र सुझाव है कि हम दिगंबर जैन धर्म के उन्नायक आचार्य कुंदकुंद द्वारा स्थापित मुनि और श्रावकों की आचारसंहिता की कठोर पालना के आधार पर दिगम्बर जैन धर्म की प्रभावना और रक्षा करने की पवित्र भावना से भट्टारकों के समीचीन स्वरूप-निर्धारण पर विचार करने के लिए पू. आचार्य वर्द्धमान सागर जी महाराज के सान्निध्य में वात्सल्यपूर्ण वातवरण में एक भट्टारक-सुधार-सम्मेलन आयोजित करें, जिसमें परंपरागत-अधिकारों के अहंकार को त्यागकर तत्त्व-श्रद्धा, कर्त्तव्यबोध, आत्म-कल्याण और धर्मप्रभावना की उदात्त भावना से प्रेरित हो गरिमामय निर्णय करें। मेरे सुझाव पर सकारात्मक प्रतिक्रिया की आशा है।

लुहाड़िया सदन, जयपुर रोड, मदनगंज-किशनगढ़, 305801 (जिला-अजमेर) राजस्थान

शोध-सन्दर्भ का लोकार्पण

सूरत। परमपूज्य मुनि श्री सुधासागर जी महाराज के पावन सान्निध्य में तथा दो सौ से अधिक जैन विद्वान्ों की सहभागिता में आयोजित विशाल श्रावकाचार संगोष्ठी के अवसर पर डॉ. कपूरचन्द्र जैन, खतौली द्वारा सम्पादित 'प्राकृत एवं जैन-विद्या शोध-सन्दर्भ' के तृतीय संस्करण का लोकार्पण सुप्रसिद्ध समाजसेवी जैन-गौरव श्रावकरत्न श्री ओमप्रकाश जैन एवं श्री कमलेश गांधी ने किया। इस पुस्तक में भारतीय विश्वविद्यालयों में अब तक हुए 1100 जैन शोधप्रबन्धों तथा विदेशी विश्वविद्यालयों में हुए 131 शोधप्रबन्धों का परिचय है। विदेशों की जानकारी डॉ. नन्दलाल जैन, रीवा द्वारा दी गई है। यह पुस्तक इस सदी के महानतम दिगम्बर जैनाचार्य आचार्य विद्यासागर जी महाराज को समर्पित है। इसमें प्रकाशन सहयोग डॉ. नटुभाई शाह, अध्यक्ष, वर्ल्ड काउंसिल ऑफ जैन एकेडेमीज, लन्दन ने किया है। प्रत्येक शोध-प्रबंध का नाम, लेखक का नाम, पता, विश्वविद्यालय, वर्ष, निदेशक का नाम आदि के साथ-साथ लगभग 250 शोध-प्रबन्धों के विस्तृत परिचय में उनके अध्यायों के नाम, मूल्य आदि दिये गये हैं। पुस्तक इस शैली में तैयार की गई है कि हिन्दी और अंग्रेजी दोनों के पाठक इसका भरपूर लाभ उठा सकें। पुस्तक का प्रकाशन श्री कैलाश चन्द जैन स्मृति न्यास, खतौली ने किया है और मूल्य मात्र 200 रुपये है। यह पुस्तक सभी विश्वविद्यालयों/कालिजों/मंदिरों/पुस्तकालयों/शोध निदेशकों शोधकर्ताओं तथा भविष्य में जैन विधाओं पर शोध करने/कराने व जैन शोध में प्रोत्साहन देने वालों के लिए अत्यंत आवश्यक है। यह पुस्तक 31 मार्च, 2005 तक मात्र 100 रुपये (60+40 डाक/कोरियर/पैकिंग व्यय) का एम.ओ. भेजकर निम्न पते से मंगा सकते हैं - डॉ. ज्योति जैन, सर्वोदय फाउंडेशन, रेलवे रोड, खतौली, 251201, जिला मुजफ्फरनगर (उ.प्र.) फोन नं. 01396-273339। पुस्तक मोतीलाल बनारसीदास 41, यू.ए., बैंगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली, 110007, फोन नं. 011-23858335 से भी उपलब्ध है।

डॉ. ज्योति जैन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रावकाचारों में सम्यग्दर्शन का स्वरूप

सिद्धान्तचार्य पं. हीरालाल जी शास्त्री

श्रावक-धर्म का ही नहीं, अपितु मुनिधर्म का भी मूल आधार सम्यग्दर्शन ही है। इसलिए सभी श्रावकाचारों में सर्वप्रथम इसी का वर्णन किया गया है, किन्तु इसके विषय में स्वामी समन्तभद्र ने जिस प्रकार से उस पर प्रकाश डालकर धर्म-धारकों का उद्बोधन किया है, और सरल एवं विशद रीति से उसका वर्णन किया है, वह अनुपम एवं अनुभव-पूर्ण है। उनके जीवन में जो उतार-चढ़ाव आया और जैसी घटनाएँ घटीं, उन सब पर प्रकाश डालते हुए उन्होंने सम्यग्दर्शन का स्वरूप, उसके अंग और दोष बताकर उसे निर्दोष पालन करने की प्रेरणा करते हुए सम्यक्त्व की महिमा बताने के साथ किसी भी प्रकार के गर्व करनेवालों पर जो प्रहार किया है, वह सचमुच अद्वितीय है।

स्वामी समन्तभद्र ने अपने पूर्ववर्ती कुन्दकुन्दाचार्य के समान न निश्चय सम्यक्त्व की चर्चा की, और न उमास्वाति के समान तत्त्वार्थश्रद्धानरूप व्यवहार-सम्यक्त्व का निरूपण किया, किन्तु परमार्थ-स्वरूप आप्त(देव)तत्प्रतिपादित आगम और निग्रन्थ गुरुओं का तीन मूढ़ताओं और आठ मदों से रहित एवं आठ अंगों से युक्त होकर श्रद्धान करने को सम्यग्दर्शन कहा है। यहाँ 'आप्त' पद सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। यदि उसके स्थान पर 'देव' शब्द कहते, तो स्वर्गादि के देवों का ग्रहण संभव था। यदि 'ईश्वर' का प्रयोग करते, तो उससे शाश्वत्कर्म-विमुक्त अनादिनिधन माने जाने वाले सनातन परमेश्वर या 'महेश्वर' आदि का ग्रहण संभव था। और यदि इसी प्रकार के किसी अन्य शब्द को कहते, तो उससे अवतार लेनेवाले, सृष्टि(जन्म)और संहार करने वाले ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि का ग्रहण संभव था। अत: उन सबका व्यवच्छेद करने के लिए 'आप्त' पद का प्रयोग किया। इस आप्त के स्वरूप में प्रयुक्त उत्सन्नदोष (वीतराग) सर्वज्ञ और आगमेशी(सार्व, शास्ता या हितोपदेशी) ये तीनों ही विशेष विशेषण अपूर्व हैं। 'उत्सन्नदोष' इस पद से सभी रागी-द्वेषी, जन्म-मरण करने वाले एवं क्षुधा-पिपासादि दोषों से युक्त सभी प्रकार के देवों का निराकरण किया गया है। 'सर्वज्ञ' पद से अल्पज्ञानियों का आगमेशी पर से स्वकल्पित या कपोल-कल्पित शास्त्रज्ञों का निराकरण कर यह प्रकट किया है कि जो सार्व अर्थात् सर्व प्राणियों के हित का उपदेशक हो, वही आप्त हो सकता है। इन तीन विशिष्ट गुणों के बिना 'आप्तता' संभव नहीं है। यह 'आप्त' पद उन्हें कितना प्रिय था, कि उसकी मीमांसा स्वरूप देवागमस्तोत्र नाम से प्रसिद्ध 'आप्तमीमांसा' की रचना की है।

आगम या शास्त्र के लक्षण को बतलाते हुए कहा है कि जो आप्त-प्रणीत हो, वादी या प्रतिवादी के द्वारा अनुल्लंघनीय हो, प्रत्यक्ष-अनुमानादि किसी भी प्रमाण से जिसमें विरोध या बाधा न आती हो, प्रयोजनभूत तत्त्वों का उपदेशक हो और कुमार्गों का उन्मूलन करनेवाला हो, ऐसा हितोपदेशी शास्तारूप आप्त के द्वारा कथित शास्त्र ही आगम कहला सकता है। इसके विपरीत, जिसके प्रणेता का ही पता नहीं, ऐसे हिंसा-प्रधान वेदादि को आगम नहीं माना जा सकता।

गुरु का स्वरूप बताते हुए कहा है कि जो इन्द्रियों के विषयों से निष्पृह हो, आरम्भ और परिग्रह से रहित हो तथा ज्ञान, ध्यान और तप में संलग्न रहता हो वह गुरु है। उक्त विशेषणों से सभी प्रकार के ढोंगी, विषय-भोगी, आरंभी, परिग्रही और ज्ञान-ध्यान से रहित मूढ़ साधुओं का निराकरण किया गया है।

इस प्रकार के आप्त, आगम और साधुओं की श्रद्धा-भक्ति, रुचि या दृढ़ प्रतीति को सम्यक्त्व का स्वरूप बताकर स्वामी समन्तभद्र ने उसके आठों अंगों का स्वरूप और उनमें ख्याति-प्राप्त प्रसिद्ध पुरुषों के नाम कहे और साथ ही सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह कही कि जैसे एक अक्षर से भी हीन मंत्र सर्प-विष को दूर करने में समर्थ नहीं होता है, उसी प्रकार एक भी अंग से हीन सम्यक्त्व भी संसार की परंपरा को काटने में समर्थ नहीं है।

एक-एक अंग की महत्ता पर उन लोगों का ध्यान जाना चाहिए, जो पर-निन्दा और आत्म-प्रशंसा करते हुए भी स्वयं को सम्यग्दृष्टि मानते हैं। स्वामी समन्तभद्र ने आठ मदों का वर्णन करते हुए दूसरी महत्त्वपूर्ण बात कही कि, जो व्यक्ति ज्ञान, तप आदि के मदावेश में दूसरे धर्मात्मा पुरुषों की निन्दा, तिरस्कार या अपमान करता है, वह उनका नहीं,अपितु अपने ही धर्म का अपमान करता है, क्योंकि धार्मिक जनों के बिना धर्म नहीं रह सकता। जो जाति और कुल की उच्चता से दूसरे हीन-जाति या कुल में उत्पन्न हुए जनों की निन्दा या अपमान करते हैं, उन्हें फटकारते हुए

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कहा - केवल सम्यग्दर्शन से सम्पन्न चाण्डाल को भी गणधरादिने देव-जैसा उच्च कहा है। जैसे भस्माच्छादित अंगार अपने आन्तरिक तेज से सम्पन्न रहता है, भले ही भस्म से ढके होने से उसका तेज लोगों को बाहर न दिखे। सम्यक्त्व जैसे आत्मिक अन्तरंग गुण का कोई बाह्य रूपरंग नहीं है कि बाहर से देखने में आवे।

इस वर्णन से उनके भस्मक-व्याधि-काल के अनुभव परिलक्षित होते हैं, जब कि उस व्याधि के प्रशमनार्थ विभिन्न देशों में विभिन्न वेष धारण करके उन्हें परिभ्रमण करना पड़ा था और लोगों के मुखों से नाना प्रकार की निन्दा सुननी पड़ी थी। पर वे बाह्य वेष बदलते हुए भी अन्तरंग में सम्यक्त्व से सम्पन्न थे।

जाति और कुल के मद करनेवालों को लक्ष्य करके कहा- जाति-कुल, तो देहाश्रित गुण हैं। जीवनभर उच्च-गोत्री बना देव भी पाप के उदय से क्षण भर में कुत्ता बन जाता है, और जीवनभर नीच-गोत्र-वाला कुत्ता भी मरकर पुण्य के उदय से देव बन जाता है।

सम्यक्त्व की महत्ता बताते हुए उन्होंने कहा- सम्यग्दर्शन, तो मोक्षमार्ग में कर्णधार है। इसके बिना न कोई भवसागर से पार हो सकता है और न ज्ञान-चारित्ररूप वृक्ष की उत्पत्ति, स्थिति, वृद्धि और फल-प्राप्ति ही हो सकती है। सम्यक्त्व-हीन साधु से सम्यक्त्व-युक्त गृहस्थ मोक्षमार्गस्थ एवं श्रेष्ठ है। तीन लोक और तीन काल में सम्यक्त्व के समान कोई श्रेयस्कर नहीं और मिथ्यात्व के समान कोई अश्रेयस्कारी नहीं है। अन्त में पूरे सात श्लोकों द्वारा सम्यग्दर्शन की महिमा का वर्णन करते हुए उन्होंने बताया-इसके ही आश्रय से जीव उत्तरोत्तर विकास करते हुए तीर्थंकर बनकर शिव-पद पाता है।

कुन्दकुन्द स्वामी के सभी पाहुड सम्यक्त्व की महिमा से भरपूर हैं, फिर भी उन्होंने इसके लिए दंसणपाहुड की स्वतंत्र रचना कर कहा है कि दर्शन से भ्रष्ट व्यक्ति ही वास्तविक भ्रष्ट है, चारित्र-भ्रष्ट हुआ नहीं, क्योंकि दर्शन-भ्रष्ट निर्वाणपद नहीं पा सकता। दर्शन-विहीन व्यक्ति वन्दनीय नहीं है। सम्यक्त्वरूप जल का प्रवाह ही कर्म-बन्ध का विनाशक है। धर्मात्मा के दोषों को कहनेवाला स्वयं भ्रष्ट है। सम्यक्त्व से ही हेय-उपादेय का विवेक प्राप्त होता है। सम्यक्त्व ही मोक्षमहल का मूल एवं प्रथम सोपान है।

सम्यक्त्व-विषयक उक्त वर्णन को प्रायः सभी परवर्ती श्रावकाचार-रचयिताओं ने अपनाया, फिर भी कुछ ने जिन नवीन बातों पर प्रकाश डाला है, उनका उल्लेख करना आवश्यक है।

स्वामी कार्तिकेय ने सम्यक्त्व के उपशम, क्षयोपशम और क्षायिक भेदों का स्वरूप कहकर बताया कि आदि के दो सम्यक्त्वों को, तो यह जीव असंख्य बार ग्रहण करता और छोड़ता है, किन्तु क्षायिक को ग्रहण करने के बाद वह छूटता नहीं और उसे तीसरे या चौथे भव में निर्वाणपद प्राप्त कराता है। इन्होंने वीतराग देव, दयामयी धर्म और निर्ग्रन्थ गुरु के माननेवाले को व्यवहार-सम्यग्दृष्टि कहा है। सम्यक्त्व सर्व रत्नों में महारत्न है, सर्व योगों में उत्तम योग है, सर्व ऋद्धियों में महा ऋद्धि और यही सभी सिद्धियों को करने वाला है। सम्यग्दृष्टि दुर्गति के कारणभूत कर्म का बन्ध नहीं करता है और अनेक भवबद्ध कर्मों का नाश करता है।

आचार्य अमृतचन्द्र ने बताया कि मोक्षप्राप्ति के लिए सर्वप्रथम सभी प्रयत्न करके सम्यक्त्व का आश्रय लेना चाहिए, क्योंकि इसके होने पर ही ज्ञान और चारित्र समीचीन होते हैं। इन्होंने जीवादि तत्त्वों के विपरीताभिनिवेश-रहित श्रद्धान को सम्यक्त्व कहा। निर्विचिकित्सा अंग के वर्णन में यहाँ तक कहा कि इस अंग के धारक को मल-मूत्रादि को देखकर ग्लानि नहीं करनी चाहिए। उपगूहनादि शेष चार अंगों का स्व और पर की अपेक्षा किया गया वर्णन अपूर्व है।

सोमदेवसूरि ने अपने समय में प्रचलित सभी मत-मतान्तरों की समीक्षा करके उनका निरसन कर सत्यार्थ आप्त, आगम और पदार्थों के श्रद्धान को सम्यक्त्व और अश्रद्धान को मिथ्यात्व कहा। सम्यक्त्व के सराग और वीतरागरूप दो भेदों का, उपशमादिरूप तीन भेदों का और आज्ञा, मार्ग आदि दश भेदों का वर्णन कर उसके 25 दोषों को बतलाकर आठों अंगों का वर्णन प्रसिद्ध पुरुषों की विस्तृत कथाओं के साथ किया है। प्रस्तुत संग्रह में कथा-भाग छोड़ दिया गया है।

चामुण्डराय ने जिनोपदिष्ट मोक्षमार्ग के श्रद्धान को सम्यक्त्व का स्वरूप बतलाकर सम्यक्त्वी जीव के संवेग, निर्वेग, आत्म-निन्दा, आत्म-गर्हा, शमभाव, भक्ति, अनुकम्पा और वात्सल्य गुणों का भी निरूपण किया है।

आ. अमितगति ने अपने उपासकाचार के दूसरे अध्याय में सम्यक्त्व की प्राप्ति, और उसके भेदों का विस्तृत स्वरूप-वर्णन करते हुए लिखा है कि वीतराग-सम्यक्त्व का लक्षण उपेक्षाभाव है और सराग-सम्यक्त्व का लक्षण प्रशम, संवेग,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुकम्पा और आस्तिक्य-भावरूप है। इनका बहुत सुन्दर विवेचन करते हुए सम्यक्त्व के श्रद्धा, भक्ति आदि आठ गुणों का वर्णन कर अंत में लिखा है कि जो एक अन्तर्मुहूर्त को भी सम्यक्त्व प्राप्त कर लेते हैं, वे भी अनन्त संसार को सान्त कर लेते हैं।

आ. वसुनन्दि ने सम्यक्त्व का स्वरूप बताकर कहा है कि उसके होने पर जीव में संवेग, निर्वेद, निन्दा, गर्हा, उपशमभाव, भक्ति, वात्सल्य और अनुकम्पा ये आठ गुण प्रकट होते हैं। वस्तुतः, सम्यक्त्वी पुरुष की पहिचान ही इन आठ गुणों से होती है।

सावयधम्मदोहाकार ने सम्यक्त्व की महिमा बताते हुए लिखा है कि जहाँ पर गरुड़ बैठा हो, वहाँ पर क्या विष-धर सर्प ठहर सकते हैं? इसी प्रकार जिसके हृदय में सम्यक्त्वगुण प्रकाशमान है, वहाँ पर क्या कर्म ठहर सकते हैं? अर्थात् शीघ्र ही निर्जीर्ण हो जाते हैं।

पं. आशाधर जी ने सम्यक्त्व की महत्ता बताते हुए कहा है कि जो व्यक्ति सर्वज्ञ की आज्ञा से 'इन्द्रिय-विषय-जनित सुख हेय है और आत्मिक सुख उपादेय है' ऐसा दृढ़ श्रद्धान करते हुए भी चारित्रमोहनीय कर्म के उदय से वैषयिक सुखों का सेवन करता है और दूसरों को पीड़ा भी पहुँचाता है, फिर भी इन कार्यों को बुरा जानकर अपनी आलोचना, निन्दा और गर्हा करता है, वह अविरत सम्यक्त्वी भी पाप-फल से अतिसन्तप्त नहीं होता है। जैसे कि चोरी को बुरा कार्य मानने वाला भी चोर कुटुम्ब-पालनादिसे विवश होकर चोरी करता है और कोतवाल द्वारा पकड़े जाने पर तथा मार-पीट से पीड़ित होने पर अपने निन्द्य कार्य की निन्दा करता है, तो वह भी अधिक दण्ड से दण्डित नहीं होता है।

पं. मेधावी जी ने उक्त बात का उल्लेख करते हुए लिखा है कि एक मुहूर्तमात्र भी सम्यक्त्व को धारण कर छोड़नेवाला जीव भी दीर्घकाल तक संसार में परिभ्रमण नहीं करता। साथ ही यह भी कहा है कि आठ अंगों और प्रशम-संवेगादि भावों से ही सम्यक्त्वी की पहचान होती है।

आ. सकलकीर्ति जी ने लिखा है कि सम्यक्त्व के बिना व्रत-तपादि से मोक्ष नहीं मिलता। आ. गुणभूषण जी ने आ.समन्तभद्रादि के समान सम्यक्त्व का वर्णन कर अन्त में कहा है कि जिसके केवल सम्यक्त्व भी उत्पन्न हो जाता है, उसका नीचे के छह नरकों में, भवनत्रिक देवों में, स्त्रियों में, कर्मभूमिज तिर्यंचों एवं दीन-दरिद्री मनुष्यों में जन्म नहीं होता।

पं. राजमल्ल जी ने सम्यक्त्व का जैसा अपूर्व सांगोपांग सूक्ष्म वर्णन किया है, वह श्रावकाचारों में, तो क्या, करणानुयोग या द्रव्यानुयोग के किसी भी शास्त्र में दृष्टि-गोचर नहीं होता। सम्यक्त्व-विषयक उनका यह समग्र विवेचन पढ़कर मनन करने के योग्य है। प्रशम-संवेगादि गुणों का विशद वर्णन करते हुए लिखा है कि ये बाह्य सम्यक्त्व के लक्षण हैं। यदि वे सम्यक्त्व के बिना हों, तो उन्हें प्रशमाभास आदि जानना चाहिए।

उमास्वामि-श्रावकाचार में रत्नकरण्डक, पुरुषार्थसिद्धयुपाय आदि पूर्व-रचित श्रावकाचारों के अनुसार ही सम्यग्दर्शन, उसके अंगों का भेद, महिमा आदि का वर्णन करते हुए लिखा है कि हृदयस्थित सम्यक्त्व निःशंकितादि आठ अंगों से जाना जाता है। इस श्रावकाचार में प्रशम, संवेग आदि गुणों के स्वरूप का विशद वर्णन किया गया है और अन्त में लिखा है कि जिसके हृदय में इन आठ गुणों से युक्त सम्यक्त्व स्थित है, उसके घर में निरन्तर निर्मल लक्ष्मी निवास करती है।

पूज्यपाद श्रावकाचार में कहा गया है कि जैसे भवन का मूलआधार नींव है, उसी प्रकार सर्व व्रतों का मूल आधार सम्यक्त्व है। व्रतसारश्रावकाचार में भी यही कहा गया है। व्रतोद्योतन श्रावकाचार में कहा है कि सम्यग्दर्शन के बिना व्रत, समिति और गुप्तिरूप तेरह प्रकार का चारित्र धारण करना निरर्थक है। श्रावकाचारसारोद्धार में, तो रत्नकरण्ड के अनेक श्लोक उद्धृत करके कहा गया है कि एक भी अंग से हीन सम्यक्त्व जन्म-सन्तति के छेदने में समर्थ नहीं है। पुरुषार्थानुशासन में कहा गया है कि सम्यक्त्व के बिना दीर्घकाल तक तपश्चरण करने पर भी मुक्ति की प्राप्ति संभव नहीं है। इस प्रकार सभी श्रावकाचारों में सम्यक्त्व की जो महिमा का वर्णन किया गया है, उस पर रत्नकरण्ड का स्पष्ट प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।

स्वामी समन्तभद्र ने, तो सम्यक्त्व के आठों अंगों में प्रसिद्धि-प्राप्त पुरुषों के नामों का केवल उल्लेख ही किया है, पर सोमदेव और उनसे परवर्ती अनेक आचार्यों ने, तो उनके कथनों का विस्तार से वर्णन भी किया है।

उपर्युक्त सर्व कथन का सार यह है कि प्रत्येक विचार-शील व्यकित को धर्म के मूल-आधार सम्यक्त्व को सर्वप्रथम धारण करने का प्रयत्न करना चाहिए और इसके लिए गुरुपदेश-श्रवण और तत्त्व-चिन्तन-मनन से आत्म-श्रद्धा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की प्राप्ति आवश्यक है।

सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होने पर नरक, तिर्यंच और मनुष्य गति का आयु-बन्ध न होकर देवगतिका आयु-बन्ध होता है। यदि मिथ्यात्वदशा में आयु-बन्ध नरकादि गतियों का हो भी गया हो, तो सातवें नरक की 33 सागर की भी आयु घटकर प्रथम नरक की रह जाती है। नरक-आयु की इतनी अधिक कमी कैसे होती है? इसका उत्तर यह है कि सम्यक्त्वी जीव प्रतिदिन प्रतिसमय जो अपने किये हुए खोटे कार्य की निन्दा, गर्हा और आलोचना किया करता है, उसका ही यह सुफल होता है कि वह पूर्व-बद्ध तीव्र अनुभाग और अधिक स्थिति वाले कर्मों को मन्द अनुभाग और अल्प स्थिति वाला कर देता है। अतः, प्रत्येक विवेकी पुरुष को प्रतिदिन अपने द्वारा किये गये पाप-कर्मों की आलोचना, निन्दा और गर्हा करते रहना चाहिए। सम्यक्त्वी पुरुष के आत्म-निन्दा और गर्हा ये गुण माने गये हैं। इनके द्वारा ही अविरत-सम्यक्त्वी पुरुष भी प्रतिसमय असंख्यात-गुणी कर्म-निर्जरा करता रहता है।

'श्रावकाचार संग्रह' (चतुर्थभाग) की प्रस्तावना से साभार

धवला (प्रथम पुस्तक) के अंग्रेजी अनुवाद का लोकार्पण

श्रवणबेलगोल/खतौली श्री दिगम्बर जैन मूल आगम ग्रन्थ षट्खण्डागम की टीका धवला (प्रथम पुस्तक) के अंग्रेजी अनुवाद का लोकार्पण भट्टारक श्री चारूकीर्ति के सान्निध्य में कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय, बर्कले (यू.एस.ए.) में ऐमरिटस प्रोफेसर प्रो. पद्मनाभ एस. जैनी ने किया। समारोह की अध्यक्षता डॉ. हम्पा नागराजैय्या पूर्व अध्यक्ष कन्नड़ साहित्य परिषद ने की। मुख्य अतिथि श्री एन. के. जैन, चीफ जस्टिस, कर्नाटक हाईकोर्ट तथा श्री वीरप्पा मोइली, पूर्व मुख्यमंत्री, कर्नाटक प्रदेश थे। ध्यातव्य है कि धवला का अंग्रेजी अनुवाद डॉ. नन्दलाल जैन रीवा और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का सम्पादन डॉ. अशोक जैन आई.आई.टी. रुड़की ने किया है। इसका प्रकाशन पं. फूलचन्द शात्री फाउन्डेशन रुड़की और श्रीगणेश वर्णी दिगम्बर जैन संस्थान वाराणसी ने किया है। 400 से अधिक पृष्ठों में समाहित इस पुस्तक का मूल्य 695/- रुपये है कागज छपाई और बाइन्डिंग अत्यन्त उच्च कोटि के हैं।

इसी अवसर पर पं. फूलचन्द्र शास्त्री जन्म-शताब्दी-समारोह के उपलक्ष्य में पं. फूलचन्द जी शास्त्री के व्यक्तित्व और कृतित्व को दर्शानेवाले ग्रन्थ 'पण्डितजी' का भी लोकार्पण हुआ। 'पण्डितजी' का सम्पादन डॉ. प्रेमचन्द्र जैन नजीबाबाद, डॉ. अशोक जैन रुड़की, डॉ. कपूरचन्द जैन खतौली और श्रीमती नीरजा जैन रुड़की ने किया है। इसका प्रकाशन राष्ट्रीय प्राकृत-अध्ययन एवं संशोधना केन्द्र, श्रवणबेलगोला ने किया है। लगभग 250 बड़े आकार के पृष्ठों में समाहित इस पुस्तक का मूल्य 250/- रुपये है। कागज, बाइन्डिंग उच्च कोटि के हैं। इस अवसर पर उत्तर और दक्षिण के शताधिक विद्वान् उपस्थित थे।

डॉ. ज्योति जैन

नारेली में भूमि पूजन एवं शिलान्यास समारोह सम्पन्न

अजमेर, 2 दिसम्बर 04 परमपूज्य संत शिरोमणि आ. 108 श्री विद्यासागर जी महाराज के सुशिष्य तीर्थोद्धारक, वास्तुविज्ञ, मुनिपुंगव 108 श्री सुधासागर जी महाराज की पावन प्रेरणा एवं आशीर्वाद से सुसंस्थापित श्री अ.भा. बहुउद्देशीय नवोदित विकासोन्मुख श्री दिगम्बर जैन ज्ञानोदय तीर्थक्षेत्र की पावनधरा पर विशाल प्रांगण में आज ''श्री राजेन्द्र नाथूलाल जैन मेमोरियल चेरिटेबल ट्रस्ट सूरत द्वारा ज्ञानोदय वानप्रस्थ आश्रम'', श्रेष्ठी श्री सोभागमल राजेन्द्र कुमार, रोहनकुमार कटारिया परिवार अहमदाबाद द्वारा ''चैत्यालय एवं कार्यालय भवन'' एवं सकल दिगम्बर जैन समाज, सूरत के अध्यक्ष श्री ओमप्रकाश जैन के मार्फत रामनगर दूदू निवासी श्री मोहनलाल रांवका तथा श्री सोभागमल राजेन्द्र कुमार रोहनकुमार कटारिया, अहमदाबाद एवं सोनीपत निवासी श्री विनयकुमार राजीव कुमार जैन परिवार अहमदाबाद आदि के पुण्यार्जन से ''वातानुकूलित विश्रामगृह'' (धर्मशाला) का शिलान्यास एवं भूमिपूजन अशोकनगर के ब्र. प्रदीप जैन के निर्देशन में सम्पन्न हुआ। श्री रतनलाल कंवरलाल अशोककुमार पाटनी, आर.के.मार्बल्स लि. के मुख्य आतिथ्य एवं श्रीमान् नाथूलाल ज्ञानेन्द्रकुमार पदमकुमार, संजय कुमार, नीरज कुमार गदिया परिवार अजमेर निवासी, सूरत प्रवासी के विशेष आतिथ्य में कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री सोभागमल कटारिया अहमदाबाद ने की।

हीराचन्द जैन

सदस्यता हेतु संपर्क करें

राजस्थान में जिनको भी '**जिनभाषित**' का आजीवन/वार्षिक सदस्य बनना हो, नीचे लिखे पते पर संपर्क करें/राशि जमा करा सकते हैं :-

श्रीमती प्रतिभा महावीर जैन
364/बी, वसुन्धरा कालोनी, टोंक रोड, जयपुर
फोन नं. - 5105191, 2704779

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुनने की कला सीखें या फिर परिणाम भुगतें

इंजी. धर्मचन्द्र बाझल्य

प्रश्न: 28 जनवरी 1986, प्रात: 11.38 मिनिट पर अमेरिका के शहर फ्लोरिडा में कौन सी घटना घटी थी?

उत्तर : चैलेंजर नामक अंतरिक्षयान को अंतरिक्ष में छोड़ा गया था।

प्रश्न: 73 वें सेकन्ड के पश्चात् क्या हुआ था?

उत्तर : आकाश में विस्फोट एवं अंतरिक्षयान चैलेंजर सात अंतरिक्ष यात्रियों सहित नष्ट हो गया था एवं अरबों डालर की क्षति।

प्रश्न: विस्फोट का कारण क्या था?

उत्तर : एक गर्म हवा के पाईप के जोड़ का खुल जाना तथा गरम हवा का ईंधन की टंकी में प्रवेश जिसमें तरल उदजन वायु भरी थी।

प्रश्न: प्रमुख कारण क्या थे?

उत्तर : अनसुनी करना। सूचना-प्रणाली की विफलता। 48 घंटे पूर्व उस जोड़ से गरम गैस रिसने की संभावना पर चर्चा की गई थी, परंतु अंतरिक्षयान की उड़ान से सम्बन्धित सभी तकनीशियों को यह तथ्य नहीं बताया गया था कि तरल उदजन (हाइड्रोजन) में गर्म गैस के प्रवेश से ईंधन की टंकी में विस्फोट हो सकता है। जिन्हें बताया गया था, उन्होंने सुना ही नहीं। कुछ ने सुनकर भी अनसुनी कर दी, क्योंकि जिम्मेदारी किसी को नहीं दी गई।

अत: आप जब कोई कार्य कर रहे हैं, तो अच्छी तरह से सहयोगी-भावना से सुनें, अन्यथा दुर्घटना हो सकती है।

प्रश्न: सुनना क्यों आवश्यक है?

उत्तर : 1. सभी कार्य बातचीत के माध्यम से सम्पन्न होते हैं।

2. अधिकतम सूचनाएँ मौखिक होती हैं।

3. किसी बड़े कार्य को या परियोजना को सम्पन्न करने में कई संस्थाओं का योगदान होता है। तब सूचनाओं /आदेशों की बाढ़-सी आ जाती है। कभी अत्यंत महत्पूर्ण सूचना/आदेश भी मौखिक हो जाते हैं।

4. आप जो करने जा रहे हैं उसका अच्छा या बुरा परिणाम, सफलता एवं असफलता आपके सुनने की क्षमता पर निर्भर करेगी।

5. आपके सुनने की कला तथा क्षमता का प्रभाव दूसरों पर भी पड़ेगा। आपकी संस्था की कार्य-कुशलता/दक्षता पर भी प्रभाव पड़ेगा।

6. आर्थिक लाभ या हानि भी हो सकती है।

प्रश्न: हम अच्छी तरह एकाग्रचित्त होकर क्यों नहीं सुनते हैं?

उत्तर : हमारे ग्रहण करने की क्षमता ठीक नहीं है। सुनते समय हमारी इच्छाएँ, भ्रम, आकांक्षाएँ, भावुकता, मान्यताएँ, आवश्यकताएँ, ईर्ष्या, पूर्वाग्रह, उतावलापन इत्यादि अनेक अनजाने कारण बाहर आने को, विस्फोट करने को तैयार रहते हैं। अत: हम सुनने की अपेक्षा बोलना आरंभ कर देते हैं।

2. हमें लिखने-पढ़ने एवं बोलने की कला सिखाई जाती है। भाषण-प्रतियोगिताएँ आयोजित की जाती हैं, किन्तु सुनने की कला-प्रतियोगिता पर कम ध्यान दिया जाता है।

3. हम अपने आपको ज्ञानी समझते हैं। श्रोताओं के मध्य अपना प्रभाव जमाने हेतु हम बीच में बोलकर ज्ञान बघारने लगते हैं। यह हमारा अहं है।

4. सोचने की गति बोलने की गति से कई गुनी अधिक होती है। दो शब्दों के अंतराल में हम सपना देखने लगते हैं। पूरी बात सुनने का धैर्य नहीं होता है। हम अधूरे कथन पर ही अधीर हो जाते हैं और बीच में बोलने लगते हैं।

5. हमारी मानसिकता, पूर्वाग्रह, संस्कार, अल्पज्ञान, अहम्, अंधविश्वास इत्यादि सभी सुनने में आड़े आते हैं।

6. तनावग्रस्त होने के कारण हम अच्छी तरह से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुन नहीं पाते हैं। तनावमुक्त हों, स्थिर-चित्त हों, तो ठीक से सुना जा सकता है।

प्रश्न: अच्छे श्रोता कैसे बनें?

उत्तर: 1. कम बोलने की आदत डालें। बातचीत कम करें।

2. सुनते समय तनावमुक्त रहें। शिथिल, शांत एवं जागरूक रहें।

3. दो शब्दों के बीच बोलने का मन्तव्य समझें। सपने न देखें। एकाग्रचित्त होकर, ध्यानपूर्वक, सावधान होकर सुनें ।

4. वक्ता से बीच में प्रश्न न करें, टोकें नहीं या सुझाव न दें।

5. सुनते समय निष्कर्ष न निकालें। मतलब तथा अर्थ न निकालें, निर्णय न करें।

6. वक्ता के मन्तव्य को समझें। विस्तृत वर्णन में न उलझें। वक्ता गोल-मोल बात कर सकता है। पुनरावृत्ति करेगा, उसमें न उलझें।

7. सुनते समय पूर्वाग्रहों से मुक्त रहें।

उपयोग

1. सभी प्राणियों में मनुष्य श्रेष्ठ है। हमारे कानों की बनावट ऐसी है कि सभी दिशाओं से सुन सकते हैं।

2. हमारी श्रवणेन्द्रिय सदैव खुली रहती है।

3. हमारी आँखें तथा रसना इंद्री बंद हो सकती है परन्तु कान, नाक तथा त्वचा सदा खुले रहते हैं, कार्य करते रहते हैं।

अत: एकाग्रता से सुनें, अच्छा सुनें।

ए- 12, शाहपुरा, भोपाल

गरीबों के लिए आसान हृदय-शल्य चिकित्सा

महाराष्ट्र के नगर जिले में सामाजिक कार्य में अग्रसर 'जैन सोशल फेडरेशन' द्वारा संचालित 'आनंदऋषि अस्पताल' ने नगर जिले में पहली बार स्वतंत्र रूप से हृदय शल्य चिकित्सा एवं हृदय अतिदक्षता विभाग खोला है। इस अस्पताल में बहुत ही कम खर्च में उच्च स्तर की वैद्यकीय सेवा उपलब्ध है।

जैन सोशल फेडरेशन द्वारा संचालित आनंदऋषि अस्पताल एवं हार्ट-सर्जरी कक्ष 'सेंटर' नामक संस्था द्वारा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हृदय-शल्य क्रिया विभाग की शुरूआत 22 अप्रैल, 2004 को अक्षय तृतीया के शुभ मुहूर्त पर की गई। इसके लिए पुणे के प्रसिद्ध हृदयरोग सर्जन डॉ.अन्वय मुळे एवं डॉ. आशुतोष हार्डीकर की सेवा मिल रही है। मात्र दो महीने में ही पच्चीस हृदय रोगियों की हृदय-शल्यचिकित्सा सफलतापूर्वक की जा चुकी है। इन शल्य चिकित्साओं में छोटे बच्चों के हृदय में हुए छिद्र को बंद करना, वॉल रिप्लेसमेंट, बायपास सर्जरी आदि शामिल है।

आनंदऋषि अस्पताल का हृदय-शल्य चिकित्सा विभाग अत्याधुनिक उपकरणों से, हार्ट लंग मशीन, बलून पंप, पेसमेकर, सेंट्रल मॉनिटरिंग वेण्टिलेटर्स से सुसज्ज है। सभी के सभी हृदय-रोगी मात्र छह दिन में ही उपचार के बाद ठीक होकर घर वापस गये। इस विभाग में प्रमुख डाक्टरों के साथ कुल 34 स्टॉफ कार्यरत है। कम पैसे में भी इलाज के दौरान चिकित्सा की गुणवत्ता में कोई कमी नहीं बरती जाती।

सी.टी. स्कॅन, होल बॉडी स्कॅन, एक्सरे, सोनोग्राफी, स्ट्रेस टेस्ट, कलर डॉप्लर, आधुनिक पैथालॉजी लैब, सुसज्जित वातानुकूलित चार आपरेशन थिएटर्स, अपघात विभाग, अतिदक्षता विभाग, सेंट्रल कॉड्रियाक मॉनिटर्स वेंटिलेंट्स, डायलेसिस एवं अन्य अत्याधुनिक उपकरणों से सुसज्जित यह अस्पताल अपने कुशल डॉक्टरों एवं अनुभवी सेवाभावी कर्मचारियों के सहयोग से रोगियों के विश्वास को जीतता है। इस अस्पताल में गरीब एवं गरजमंद हृदय रोगियों की शल्य-चिकित्सा कम खर्च में मात्र पचास हजार रुपये में, न नफा, न नुकसान। इस तत्त्व के आधार पर की जाती है। आज तक ऐसे 25 गरीब हृदय रोगियों की शल्य-चिकित्सा की जा चुकी है। जबकि प्रत्येक के लिए कम से कम 90 हजार से एक लाख रुपये तक खर्च होता है। यह अस्पताल प्रत्येक हृदय-शल्यचिकित्सा के लिए 40 हजार रुपये का घाटा सामाजिक प्रतिबद्धता के नाते सहन करता है। हृदय शल्य-चिकित्सा के लिए अधिक जानकारी के लिए इस विभाग के समन्वयक डॉ.वसंत कटारिया से 9822083640 इस मोबाईल फोन पर संपर्क स्थापित किया जा सकता है।

'जैन बोधक, नवम्बर 2004'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गर्भिणी के लिए उचित/अनुचित व्यवहार और प्राकृतिक उपचार

डॉ. वन्दना जैन

सामान्यत: माँ बनना प्रत्येक स्त्री का सपना होता है। हो क्यों न, एक नये जीवन को दान देने का सौभाग्य जो उसे प्राप्त होता है। पर गर्भावस्था में माँ को काफी परेशानियों का सामना करना पड़ता है, किन्तु कुछ सामान्य सावधानियों से माँ उन परेशानियों को कम कर सकती है। गर्भावस्था के समय यदि कब्ज हो, तो किसी रेचक दवा का प्रयोग नहीं करना चाहिये, इससे गर्भपात तक हो सकता है लेकिन नियमित रूप से गीली कमर पट्टी और कटि-स्नान लेने से कोष्ठवद्धता (कब्ज) नहीं रह सकती। इसके सिवा प्रसव के पहले दिन तक इन दोनों को चालू रखने से गर्भावस्था में अनेक रोगों से छुट्टी मिलती है। अत्यन्त आसानी से प्रसव होता है। प्रसव का कष्ट, तो अनेक अंशों से गायब हो जाता है। कटि-स्नान का पानी खूब ठंडा नहीं होना चाहिए। समशीतोष्ण रहना चाहिए। डॉ. नागेन्द्र कुमार जी 'नीरज' की पत्नी डॉ. मन्जु नीरज ने स्वयं की बच्ची के जन्म के पहले दिन तक यह उपचार (कटि स्नान व पेट पर गीली लपेट) लिया, तो प्रसव बिना बाधा के आराम से हो गया। यदि कटि-स्नान संभव न हो, तो गीली लपेट के ऊपर ऊनी लपेट लगाकर भी काम चलाया जा सकता है। इससे ही काफी लाभ होगा।

गर्भावस्था में प्रतिदिन दो बार स्नान करना चाहिए, क्योंकि जीवनी-शक्ति की वृद्धि के लिये इससे बढ़कर कोई साधन नहीं है। यदि दोबारा स्नान में असुविधा हो, तो भीगी तौलिया (नैपकिन) से सम्पूर्ण शरीर पोंछ लेना चाहिए। स्नान से पूर्व कुछ देर धूप में रहने व मालिश करने से शरीर के खाद्य कैल्शियम आदि लवण आसानी से शरीर में गृहीत होते हैं।

इस समय परिमितरूप से परिश्रम करना नितान्त आवश्यक है। प्रतिदिन खुली हवा में एक दो किलोमीटर तक टहल सकें, तो सर्वोत्तम है। इससे मेहनत भी हो जाती है तथा रक्त-संचार में वृद्धि होती है। भूख भी खुल जाती है। पाचन अच्छी तरह से होकर शरीर से मल भली प्रकार से निकल जाता है तथा नींद भी अच्छी आती है। भ्रमण के समय श्वांस प्रश्वांस का व्यायाम, दीर्घ श्वसन प्राणायम (लम्बे गहरे श्वांस लेना व छोड़ना) करना चाहिए।

यदि भ्रमण में सुविधा न हो, तो घर की छत व आँगन में ही टहलना चाहिए। (थकावट आने तक)। इसके साथ ही पारिवारिक कार्य करते हुए शरीर को क्रियाशील व कर्मठ बनाये रखना चाहिए। पारिवारिक कार्य स्वेच्छापूर्वक करते रहने से प्रसव बिना कष्ट के व जल्दी होता है तथा खतरे की आशंका भी नहीं रहती।

निषेध - गर्भिणी के पेट पर कभी भी मालिश नहीं करना चाहिए। यदि वह किसी कारण से परिश्रम न कर सके, तो हाथ पैर की मालिश एक अच्छा विकल्प है। इस समय अत्यधिक परिश्रम नहीं करना चाहिए। जल्दी-जल्दी चलना, एकाएक उठकर बैठना, बोझ उठाना, अधिक देर तक खड़े रहना, जल्दी सीढ़ी चढ़कर ऊपर जाना व उतरना, लम्बे डग भरकर चलना, कूंदकर कमरे से उतरना, घोड़े की सवारी, साइकिल चलाना, टेनिस खेलना, नाचना और तैरना छोड़ देना चाहिए। इन सब से कभी रक्तस्त्राव व गर्भपात भी हो सकता है। आठवें महीने के बाद ट्रेन व नाव का सफर भी ठीक नहीं है तथा पैर से सिलाई मशीन चलाना भी छोड़ देना चाहिए।

हर तरह की जल्दबाजी का काम छोड़ देना चाहिए। व हर काम को धीरे करना चाहिए। हर काम में अधिकता से बचना चाहिए। परिश्रम का कार्य करने के बाद, थकावट आने से पहले विश्राम करना चाहिए। विश्राम किये बिना परिश्रम करना उचित नहीं है।

प्रतिदिन 20 मिनिट तक शवासन लगाना चाहिए। आठ घंटे विश्राम आवश्यक है तथा उस समय कमरे की सभी खिड़कियाँ खुली रखना आवश्यक है। यदि हृदय कमजोर हो, तो एक महीने तक नहाने के पहले 10 मिनिट के लिए पाद (पैरों का) स्नान देना उचित है।

आवश्यकता पड़ने पर 10-15 मिनिट भापस्नान दिया जा सकता है, पर द्वितीय मास के बाद अधिक समय भापस्नान देना उचित नहीं है। इस समय हमेशा प्रसन्न बने रहना चाहिए। इसलिए हमारे देश में साध (सादें या पंचामृत) की व्यवस्था है। गर्भिणी की मानसिक-अवस्था संतान का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भावी जीवन बनाने में विशेष रूप से मदद करती है। इसलिए इस समय अच्छी पुस्तकें पढ़ना चाहिए और पवित्र तथा उच्च विचार रखकर एक आनंददायक वातावरण में रहना चाहिए। इसी के साथ भय, उत्कन्ठा, दुश्चिंता और हर तरह की उत्तेजना का पूर्ण रूप से बहिष्कार करना जरूरी है। हर समय प्रसव-समय की विपत्तियों के बारे में न सोचें, वरन् यह दोहरायें कि मेरा प्रसव अच्छी तरह से होगा व दृढ़ विश्वास रखें कि सब कुछ स्वाभाविक हो जायेगा। इससे काफी लाभ पहुँचेगा। सभी प्रकार की उत्तेजना को छोड़ देने से प्रसव स्वाभाविक होता है।

इस समय कपड़े कसकर न पहनें। टाइट कपड़े न पहनें। सामान्य हालातों में भी जब यह नुकसानदेह है, तो फिर इस समय जो गर्भवृद्धि में बाधा पड़ती है और इससे बच्चे विकलांग पैदा होते हैं। गर्भस्थ शिशु जिस प्रकार स्वच्छंद रूप से रह सकें उस ओर भी हमेशा ध्यान देना चाहिए।

गर्भवती महिलाओं के लिए चमत्कारी व्यायाम

शहर में श्रमविहीन जीवनपद्धति में रहने वाले सभी स्त्री पुरुषों को यह बात अच्छी तरह मालूम हो गई है कि स्वस्थ एवं चुस्त रहने के लिए नियमित व्यायाम आवश्यक है, किन्तु जब महिलाएँ गर्भवती हो जाती हैं तब निश्चय करना मुश्किल हो जाता है कि अब वे कौन-सा व्यायाम करें, कौन-सा न करें। एक बात का ध्यान रखें कि जिन व्यायामों में पेट पर जोर आता है अथवा आगे या पीछे दबाव होता है, वे व्यायाम न करें। समय एवं परिस्थितियों के अनुसार योगासन का चुनाव करें। सूक्ष्म व्यायाम की सारी क्रियाएँ की जा सकती हैं। सूर्यनमस्कार (परमेष्ठी नमस्कार) भी किया जा सकता है, किन्तु स्थिति नं. 2 (अर्थात् पर्वतआसन) पर जोर न दें।

डॉ. ओमप्रकाश आनंद के विचार एवं अनुभव से, तो अंग-अंग के सारे व्यायाम (केवल उपनौलि व नौलि को छोड़कर) गर्भवती महिलाएँ कर सकती हैं। उनके अनुसार रीढ़ के घुसावदार व्यायाम भी महिलाएँ उस समय कर सकती हैं। उनके अनुसार यदि गर्भवती महिलाएँ चौपाए (गाय, भैंस, बकरी) जानवरों की तरह घुटनों एवं हथेलियों के सहारे (छोटे बच्चों की तरह) सुबह शाम जमीन पर या ड्रांइगरूम में 10-15 मिनिट चलें, तो उन्हें न, तो गर्भकाल में कमरदर्द होगा, और न ही कब्ज तथा गैस की शिकायत होगी, न मंदाग्नि होगी और न ही शिशुजन्म के समय प्रसवपीड़ा होगी। यह उनका परिवार एवं उनके अन्य महिलाओं पर किया गया सफल प्रयोग है। हाँ, व्यायाम करते समय घुटनों में रुई की पट्टी या मुलायम गदी (नी कैप) बांध लें। इस समय पर रखी गई थोड़ी-सी सावधानी आपके इस महत्वपूर्ण समय को और अधिक सहज करती है। अतः, रखें थोड़ा-सा ख्याल, और पायें स्वास्थ्य का अनमोल उपहार .....

कार्ड पैलेस, वर्णी कालोनी, सागर
फोन 226877

सदलगा में पंचपरमेष्ठी विधान का आयोजन

'कल्याणोदय तीर्थ' पंचकल्याणक-पूजा-महोत्सव की द्वितीय वर्षगाँठ के मंगल अवसर पर आयोजित श्री पंचपरमेष्ठी विधान, श्री चौंसठ रिद्धि विधान, श्री शांतिनाथ विधान तथा रथयात्रा महोत्सव कार्यक्रमों का भव्य आयोजन आचार्य श्री 108 विद्यासागर मुनिराज के सद्-आशीर्वाद तथा परमपूज्य ''आचार्यश्री'' मुनिसंघ तथा बाल-ब्रह्मचारी विद्वान्ों के सानिध्य में सानन्द सम्पन्न होंगे। कार्यक्रमों में आपकी उपस्थिति बन्धु तथा मित्रों सहित आपेक्षित है।

सभी कार्यक्रमों का स्थान : गुम्फा, सदलगा (समीप बस स्टैंड)

अपने पधारने के पूर्व लिखित सूचना ''कल्याणोदय तीर्थ'' कमेटी के कार्यालय में दिनांक 31 जनवरी 2005 तक अवश्य भेजने की कृपा करें।

''कल्याणोदय तीर्थ''
श्री 1008 शान्तिनाथ दिगम्बर जैन अशिशय क्षेत्र,
सदलगा (जिला) बेलगाम (कर्नाटक) - 591239
फोन - 08338-251006 (श्री कुमार संतोष)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिज्ञासा-समाधान

पं. रतनलाल बैनाड़ा

जिज्ञासा - स्थितिकाण्डक घात तथा स्थितिबंधापसरण में क्या अन्तर है?

समाधान - सत्ता में स्थित कर्मों की स्थिति घटने को स्थितिखण्डन या स्थितिकाण्डक घात कहते हैं। जैसे - सत्तर कोड़ा-कोड़ी की स्थिति का घटकर अन्त: कोड़ा-कोड़ी हो जाना। लेकिन स्थितिबंधापसरण इससे भिन्न है अर्थात् परिणामों की विशुद्धि वशात् नवीन बन्ध को प्राप्त हो रहे कर्मों में स्थितिबन्ध घटता-घटता होना स्थितिबंधापसरण है। निष्कर्ष यह है कि स्थितिकाण्डक घात का सम्बन्ध सत्ता में स्थित कर्मों से है, जबकि स्थितिबंधापसरण का संबंध नवीन बंध को प्राप्त हो रहे कर्मों के स्थितिबंध से है।

प्रश्नकर्ता - सौ. सविता, नन्दुरबार

जिज्ञासा - जन्म-कल्याणक के समय अभिषेक के लिए प्रयोग किये जाने वाले कलशों का माप मुख = 1 योजन, उदर = 4 योजन, ऊँचाई = 8 योजन कहा है, तो क्या तीर्थंकर की कितनी ही अवगाहना हो, कलशों का आकार समान ही होता है?

समाधान - 'तिलोयपण्णत्ति' अधिकार-1, गाथा-107 से 116 तक किसी वस्तु के नाप के लिए तीन प्रकार के अंगुलों का वर्णन है, जो इस प्रकार है -

1. उत्सेधांगुल - एक धनुष प्रमाण अवगाहना वाले मनुष्य के अंगुल को कहते हैं। इससे चारों गतियों के जीवों के शरीर की अवगाहना और चारों प्रकार के देवों के निवास स्थान व नगर आदि का प्रमाण जाना जाता है।

2. प्रमाणांगुल - पाँचसौ उत्सेधांगुल प्रमाण भरतचक्रवर्ती के अंगुल को प्रमाणांगुल कहते हैं, इससे दीप, समुद्र, कुलाचल तथा भरतादिक क्षेत्र का प्रमाण हुआ करता है।

3. आत्मांगुल - जिस-जिस काल में भरत और ऐरावत क्षेत्र में जो मनुष्य होते हैं, उनके अंगुल का नाम आत्मांगुल है। इससे झारी, कलश, हल, मूसल, चमर, छत्र आदि का प्रमाण जाना जाता है।

उपरोक्त प्रमाण से स्पष्ट है कि उत्सेधांगुल से लघुयोजन (चार कोश का) बनता है तथा प्रमाणांगुल से महायोजन (दो हजार कोश का) बनता है। इन दोनों के माप में कोई बदलाव नहीं होता। जबकि आत्मांगुल छोटा-बड़ा हुआ करता है। चूंकि कलश का माप आत्मांगुल से किया जाता है, इसलिये जिस तीर्थंकर की जितनी अवगाहना रही होगी उसके अनुसार ही कलशों का माप भी छोटा या बड़ा रहा होगा, यह स्पष्ट होता है। आत्मांगुल के अनुसार कलश भी छोटे या बड़े रहे होंगे। पर उनकी बनावट में 1-4-8 का अनुपात भी रहा होगा, ऐसा मानना चाहिए।

जिज्ञासा - क्या केवलज्ञान किसी द्रव्य की प्रथम तथा अंतिम पर्याय को जानता है?

समाधान - ज्ञान का कार्य किसी अस्तित्त्व वाले द्रव्य और उसकी पर्याय को जानना है। किसी भी द्रव्य की प्रथम और अंतिम पर्याय का जब अस्तित्त्व ही नहीं है, तो ज्ञान द्वारा उसे जानने का प्रसंग ही नहीं उठता। मान लो हम भगवान महावीर की चर्चा करें, तो यदि उनकी कोई प्रथम पर्याय थी तो उससे पहले क्या उनकी आत्मा अस्तित्त्व में नहीं थी। अत: जब उस आत्मा का आदि ही नहीं है तो उसकी प्रथम पर्याय का अस्तित्त्व कैसे संभव है। अब जबकि उस आत्मा को मोक्ष प्राप्त हो चुका है, तब भी उसमें प्रति समय नवीन पर्याय का उत्पाद और पूर्व पर्याय का विनाश निरंतर हो रहा है और अनंतानंत काल तक होता रहेगा। अर्थात् उस आत्मा की अंतिम पर्याय कोई होगी ही नहीं। अत: जब किसी भी द्रव्य की प्रथम और अंतिम पर्याय का अस्तित्त्व ही नहीं है, तब वह केवलज्ञान का विषय कैसे बन सकती है।

तत्त्वार्थसूत्र अध्याय -1 'सर्वद्रव्यपर्यायेषु केवलस्य' का अर्थ पूज्य आचार्य विद्यासागर जी महाराज बहुत सुन्दरता से करते हैं। उनका कहना है कि समस्त द्रव्यों की वर्तमान समस्त पर्यायों में तथा भूत और भविष्यत्काल संबंधी अनंतपर्यायों में (समस्त नहीं) केवलज्ञान का विषय संबंध है। इससे स्पष्ट है कि किसी भी द्रव्य की प्रथम और अंतिम पर्याय केवलज्ञान का विषय नहीं होती।

जिज्ञासा - सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका द्वितीय खण्ड पूर्वार्ध में, पं. टोडरमल जी ने भोगभूमियां जीवों के, आयु के नौ माह शेष रहने पर, त्रिभाग में आयु बन्ध लिखा है, जबकि सुनने में छह माह शेष रहने पर आता है, क्या मानना चाहिए?

समाधान - पं. टोडरमल जी ने सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका द्वितीय खण्ड पूर्वार्ध, पृष्ठ 191 पर गोम्मटसार कर्मकाण्ड

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गाथा 158 की टीका करते हुए लिखा है कि 'भोगभूमियां के नव महीना आयु अवशेष रहै, तब त्रिभागकरि आयुबंधै है।' यह कथन यद्यपि गाथा में नहीं है, पर पं. टोडरमल जी ने, गोम्मटसार कर्मकाण्ड की केशववर्णी कृत टीका का अनुवाद करते हुए लिखा है। केशववर्णी टीका में लिखा है 'देवनारकाणां स्वस्थितौ षठमासेषु भोगभूमिजानां नवमासेषु च अवशिष्टे त्रिभागेन आर्युबन्ध संभवात्।' अर्थ - देव नारकियों की, अपनी आयु 6 मास शेष रहने पर और भोगभूमियां जीवों की नवमास शेष रहने पर, त्रिभाग में आयुबंध संभव होता है।

गोम्मटसार जीवकाण्ड की पं. टोडरमल जी द्वारा रचित सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका टीका प्रथम खण्ड पृष्ठ 600 पर गाथा 618 की टीका में भी इसी प्रकार नवमास रहने पर आयुबन्ध की योग्यता कही है। जबकि आचार्य नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती ने कर्मकाण्ड गाथा 640 में इस प्रकार कहा है -

'भोगभुमा देवाउं छम्मासवट्ठिगे पबद्धंति।'

अर्थ - भूमिभूमियां जीव आयु के छह मास शेष रहने पर देवायु का बंध करते हैं। (इस गाथा की टीका करते हुए केशववर्णी जी ने भी भोगभूमियां जीवों के आयु के छह मास शेष रहने पर मात्र देवायु का होना लिखा यथा 'भोगभूमिजा: षण्मासेऽवशिष्टे दैवं') निष्कर्ष यह है कि आ. नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती तो भोगभूमियां जीवों के छह माह आयु शेष रहने पर ही आयु बंध मानते हैं। परन्तु केशववर्णी के दो मत हैं और उसी का अनुवाद पं. टोडरमल जी ने किया है। अब आचार्यों के द्वारा कहे गये अन्य प्रमाणों पर विचार करते हैं।

1. श्री धवला पु. 10 पृ. 234 पर इस प्रकार कहा है- 'णिरूवक्कमाउआ पुण छम्मासावसे से आउअबंध-पाओग्गा होंति' अर्थ - जो निरूपक्रमायुष्क (देव एवं नारकी तथा भोगभूमियां) जीव हैं वे अपनी भुज्यमान आयु छह मास शेष रहने पर आयुबंध के योग्य होते हैं।

2. श्री धवला पु. 6 पृष्ठ 170 अर्थ- 'असंख्यात् वर्ष की आयु वाले भोगभूमियां तिर्यंच और मनुष्यों में देव और नारकियों के समान 6 मास से अधिक आयु रहने पर परभव संबंधी आयु के बंध का अभाव है।'

उपरोक्त प्रमाणों को देखने से यह स्पष्ट होता है कि सभी आचार्यों का मत तो भोगभूमियां जीवों के, आयु का 6 माह शेष रहने पर ही आयु बंध स्वीकार करता है।

जिज्ञासा - क्या विपुलमति मन:पर्ययज्ञान वाले मुनि महाराज चरमशरीरी होते हैं?

समाधान - यद्यपि तत्त्वार्थसूत्र की सर्वार्थसिद्धि, राजवार्तिक, श्लोकवार्तिक आदि टीकाओं में इसका स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता है, फिर भी अन्य शास्त्रों में पाया जाता है कि विपुलमति मन:पर्ययज्ञान धारी मुनिराज चरमशरीरी ही होते हैं। इस संबंध में कुछ प्रमाण इस प्रकार हैं-

1. पंचास्तिकाय की टीका में आ. जयसेन महाराज ने गाथा 43 की टीका में इस प्रकार कहा है - निर्विकारात्मोपलब्धि भावनासहितानां चरमदेहमुनीनां विपुलमतिर्भवति। अर्थ - विपुलमतिमन:पर्ययज्ञान निर्विकार आत्मोपलब्धि भावना से सहित चरम शरीरी मुनियों को होता है।

2. श्री गोम्मटसार जीवकाण्ड - टीकाकार-पं. रतनचन्द जी मुख्तार, पृष्ठ-518 पर कहा है "ऐसा नियम है कि विपुलमति मन:पर्ययज्ञान उसी के होता है जो तद्भवमोक्षगामी होते हुए भी क्षपकश्रेणी पर चढ़ता है, किन्तु ऋजुमति मन:पर्ययज्ञान के लिए ऐसा कोई नियम नहीं है। वह तद्भवमोक्षगामी के भी हो सकता है और अन्य के भी हो सकता है।"

3. जैनतत्त्वविद्या-लेखक-मुनि प्रमाणसागर जी महाराज, पृष्ठ-258 पर कहा है "विपुलमति अप्रतिपाति है यह एक बार उत्पन्न होने के बाद केवलज्ञान होने तक बना रहता है। विपुलमति मन:पर्ययज्ञान तद्भव मोक्षगामी और वर्धमानचारित्री मुनियों को ही होता है, ऋजुमति मन:पर्ययज्ञान का इस विषय में कोई नियम नहीं है।"

4. श्री सर्वार्थसिद्धि अध्याय 1/24 के विशेषार्थ में पं. फूलचन्दजी सिद्धान्ताचार्य ने पृष्ठ 93 पर लिखा है कि विपुलमति मन:पर्ययज्ञान उसी के होता है, जो तद्भवमोक्षगामी होते हुए भी क्षपकश्रेणी पर चढ़ता है, किन्तु ऋजुमति के लिए ऐसा कोई नियम नहीं है। वह तद्भवमोक्षगामी के भी हो सकता है और अन्य के भी हो सकता है।

5. तत्त्वार्थसूत्र अध्याय 1, सूत्र 24 के भावार्थ में पृष्ठ 20 पर पं. पन्नालाल जी साहित्याचार्य ने लिखा है "ऋजुमति होकर छूट भी जाता है पर विपुलमति केवलज्ञान के पहले नहीं छूटता।"

6. भावदीपिका लेखक-पं. दीपचन्द जी काशलीवाल ने पृष्ठ 116 पर इसप्रकार कहा है- 'अर विपुलमति तद्भव मोक्षगामी के ही होय'

उपरोक्त प्रमाणों से विपुलमति मन:पर्ययज्ञानी मुनिराज चरमशरीरी ही होते हैं ऐसा स्पष्ट होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीना इसी का नाम है

डॉ. सुरेन्द्र कुमार जैन

यद्यपि वह अभी बालक ही था, किन्तु जिज्ञासायें दार्शनिक की तरह करता था। उसमें अपनों के प्रति ही नहीं, परायों के प्रति भी एकजैसा आदरभाव था। जब वह परिवार के साथ भोजन करने बैठता, तो सबसे पहले अपने दादाजी की थाली में भोजन परोसने के लिए कहता, फिर पिताजी की थाली में भोजन परोसने के लिए कहता और फिर अपनी छोटी-सी मनपसंद थाली में भोजन लेता और बड़े चाव से भोजन करता। वह जूठाभोजन नहीं लेता था, अत: दादाजी एवं पिताजी भोजन प्रारम्भ करने से पूर्व उसे अपनी थाली में से कुछ न कुछ खिलाते, मानो जितना आदर उस बालक का उनके प्रति था, उतना ही वात्सल्य वे उसे देते। परस्पर स्नेह-सम्बन्धों का यह सूत्र उस घर की शान था, जिसे वे हर स्थिति में जिलाये रखना चाहते थे। बालक की मोहक मुस्कान और मधुर वाणी सबके कानों को रसमय बनाती थी। दादा उसे प्रात: भ्रमण पर साथ ले जाते और उसे णमोकार मंत्र का उच्चारण करने के लिए कहते। जब वह बालक बड़ी श्रद्धा, तन्मयता और भक्ति के साथ 'णमो अरिहन्ताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं' हाथ जोड़कर सुनाता, तो देखने-सुननेवाले भी उसकी प्रशंसा करते और अपने शुभाशीषों से उसे भर देते। दादाजी मन-ही-मन विचारते कि मेरा यह नाती भी मेरे पुत्र (अपने पिता) की तरह संस्कार ग्रहण कर रहा है, अत: मैं निश्चित हूँ कि हमारा घर धन-धान्य से भरा रहेगा, क्योंकि जिस घर में धर्म और संस्कार रहते हैं, वहाँ लौकिक संसाधन कभी कम हो ही नहीं सकते।

समय व्यतीत होता गया और दादाजी भी अपने पुत्र को समस्त कार्यभार सौंपकर गार्हस्थिक कार्यों के प्रति उदासीन हो घर के ही एक कक्ष में निवास करने लगे। निरन्तर स्वाध्याय उनका क्रम बन गया। वह बालक, जिसका नाम अभय था, अब किशोरावस्था में पहुँच गया था। जब भी कहीं जाता, अपने दादाजी के विषय में जरूर चर्चा करता। परिवार के संस्कार ही ऐसे थे कि पिता अपने पुत्रों/पुत्रियों के प्रति प्राय: उदासीन रहते थे। दादा का ही यह कार्य था कि वे नाती-नातिनों का ध्यान रखते थे। कहते हैं कि मूल से बड़ा ब्याज होता है, सो दादाजी का स्नेह भी अपने नाती 'अभय' के प्रति था।

एक दिन अभय ने दादाजी से पूछा- 'दादाजी ! आप पिताजी के व्यवसाय में साथ क्यों नहीं निभाते? दिनरात इसी कक्ष में एकांकी हो अध्ययन, स्वाध्याय, सामायिक, जप करते रहते हो। क्या आपको पिताजी के कार्य पसंद नहीं हैं?'

बालक 'अभय' के इस प्रश्न से एक क्षण के लिए तो दादाजी ठिठके और फिर प्रेम से बोले- 'बेटा ! जिंदगी में सुख और दु:ख आते ही रहते हैं। सुख कब दु:ख में बदल जाये, कह नहीं सकते और कब दु:ख के बादल छँट जाये; यह भी कहना मुश्किल है। अत:, व्यक्ति को समभाव में जीना चाहिए, ऐसा मैंने एक संत के मुख से सुना था। अत:, सुख मिलता रहे और दु:ख कभी न आये; इसलिए जीवन के उत्थान के विषय में सोचना मुझे रुचिकर लगा। वैसे भी मैंने अपने पुत्र और तुम्हारे पिता को घरगृहस्थी और व्यापार के कार्य में इतना कुशल बना दिया है कि अब उन्हें मेरे सक्रिय साथ की आवश्यकता ही नहीं पड़ती।' ऐसा कहकर दादाजी कुछ सोचने लगे।

बालक 'अभय' ने फिर पूछा, 'तो दादा जी! क्या आपको हम लोगों से कोई शिकायत नहीं है?'

'नहीं बेटा, शिकायत कैसी? मैंने अपने पारिवारिक उत्तरदायित्वों का भलीप्रकार निर्वाह किया है। तुम्हारे पिता एवं तुम्हारी बुआ को पढ़ाया, लिखाया, उनका विवाह किया, उन्हें योग्य बनाया। आज वे अपना व्यवसाय भी कुशलता से चला रहे हैं और गृहस्थी का संचालन भी कुशलता से कर रहे हैं। वे मेरा भी पूरा ध्यान रखते हैं। बेटा, हमें किसी से कोई शिकायत नहीं है।'

'दादाजी ! क्या आपकी जरूरत हमारे पिताजी को नहीं पड़ती?' अभय ने पूछा।

'ऐसा नहीं है बेटा। तेरे पिता अपने कार्यों में पारंगत हैं, फिर भी यदि उन्हें कहीं मेरे परामर्श की आवश्यकता पड़ती है, तो मैं उन्हें उचित परामर्श देता हूँ। मैं उनके कार्यों में बाधक भी नहीं हूँ और साधक भी नहीं हूँ; किन्तु उनका बुरा नहीं देख सकता, इसलिए कभी-कभी बिना पूछे भी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परामर्श देता हूँ। तुम लोग मेरे पास आकर बैठते हो, अच्छी-अच्छी घरबाहर की खबरें सुनाते हो, तो मेरा भी मनोरंजन हो जाता है। घर के सभी सदस्यों में मैं अपने अनुभव बाँटता हूँ, ताकि वे कभी किसी के बहकावे में नहीं आ सकें, कोई उन्हें पराजित नहीं कर सके। हाँ, यदि कोई सलाह नहीं मानता, तो मैं विचलित भी नहीं होता। यह देखना मेरा काम नहीं है कि किसने मेरे परामर्श पर कितना अमल किया? तुम्हारी माँ मुझे अच्छे-से-अच्छा भोजन कराती है। तुम्हारे पिता और मैं दोनों प्रातः एकसाथ दर्शन-पूजन हेतु जिनमन्दिर जाते हैं। एकसाथ अभिषेक-पूजन और स्वाध्याय करने से हमें जो शांति मिलती है, वह अवर्णनीय है। ऐसा कह दादाजी रुक गये।

'अभय' की जिज्ञासायें बढ़ती ही जा रही थी। उसने पूछा - 'दादाजी! हम सबके दुख का कारण क्या है?'

यह सुन दादाजी ने जो बताया, वह अनुकरणीय था। वे बोले-पूर्वजन्म में हम सबने जो कुछ अच्छे कार्य किये होंगे, उनका यह प्रतिफल है। हमने प्रभूत सम्पदा भले ही न देखी हो, किन्तु जीवन में अभाव किसी चीज का नहीं रहा। आज भी हमारे परिवार में दान के संस्कार हैं। साधुओं के प्रति भक्ति है। यदि कोई साधु हमारे नगर में आते हैं, तो हम सब उन्हें आहार देते हैं, उनकी वैयावृत्ति करते हैं। जबतक साधु के आहार का काल नहीं निकल जाये तब तक हम भोजन ही नहीं करते। हम चाहते हैं कि साधु-संगति का सुयोग हमें मिलता रहे। प्रतिवर्ष एक-न-एक निर्वाण-क्षेत्र की वन्दना तो हम लोग करते ही हैं। हमारे परिवार के यह संस्कार हैं कि यहाँ से कोई भी भूखा नहीं गया और यदि कोई दुखियारा आया, तो उसकी कुछ न कुछ मदद हम सबने अवश्य की। वास्तव में दान के संस्कारों ने ही हमें किसी वस्तु का अभाव नहीं होने दिया। जिस घर में जिन-भक्ति, साधु-सेवा और दान की परम्परा नहीं है, वह घर, घर नहीं, श्मशान के समान है, ऐसा हमारे आचार्य कहते हैं। बेटा, तुम भी अपनी इन परम्पराओं का पालन करना।'

'हाँ दादाजी, ऐसा ही होगा।' ऐसा कहते हुए बालक अभय स्वयं में अत्यन्त गर्व महसूस कर रहा था कि उसे ऐसे धर्मपरायण एवं संस्कारित परिवार में जन्म मिला। उसे लगा कि जीना इसी का नाम है, जिसमें जिन्दगी का आनन्द भी हो और स्वपरोपकार की भावना भी हो। काश, सबका जीवन हमारे दादाजी-जैसा होता?

सम्पर्क- एल-65, न्यू इन्दिरानगर, बुरहानपुर (म.प्र.)

श्री शांतिलाल जी दिवाकर, सिवनी (म.प्र.) का देहावसान

मध्यप्रदेश की पावन धरा सिवनी नगर जो सम्पूर्ण भारत वर्ष में विद्वानों की नगरी के रूप में विख्यात है। ऐसी ही पावन धर्म नगरी की पुण्य धरा पर प्रतिष्ठित दिवाकर परिवार में श्रीयुत स्व. सि. कुंवरसेन जी दिवाकर के यहाँ दिनांक 22 नवम्बर 1923 को एक नररत्न ने जन्म लिया जो आगे चलकर श्री शांतिलाल दिवाकर के नाम से विख्यात हुए।

दीपावली के पावन दिवस पर दिनांक 12 नवम्बर 04 शनिवार को प्रातःकाल भगवान महावीर एवं णमोकार मंत्र-राज का श्रवण एवं चिन्तवन करते हुए उन्होंने राजधानी भोपाल में अपनी इस नश्वर देह का परित्याग किया। जैनधर्म के मूर्धन्य उद्भट विद्वान् एवं चारित्र-चक्रवर्ती (आ.श्री शांतिसागर जी महराज के जीवन-चरित्र) महाग्रंथ के रचयिता, विद्वतरत्न, जिनशासन रत्न, धर्मदिवाकर, विद्या-वारिधि, न्याय तीर्थ शास्त्री आदि महान उपाधिणें से विभूषित स्व. पं. श्री सुमेरुचंद जी दिवाकर आपके अग्रज थे। वर्तमान में आपके अनुज एवं विद्वान् पं. श्री श्रेयांस जी दिवाकर एवं प्रख्यात अधिवक्ता श्री अभिनंदन कुमार जी दिवाकर सिवनी में निवासरत हैं।

आपके सुपत्र श्री ऋषभकुमार जी दिवाकर मध्यप्रदेश के उच्च ए.डी.जी. पोलिस के विशिष्ट पद पर आसीन हैं। श्री दिवाकर जी के स्वर्गवास पर दिनांक 14 नवम्बर 04 को श्री दिगम्बर जैन मंदिर हबीबगंज भोपाल के सभागार में एक शोक सभा का आयोजन किया गया। जिसमें भोपाल के समस्त दिगम्बर जैन मंदिरों के पदाधिकारी एवं सदस्यगणों ने दिवंगत आत्मा के प्रति अपनी शोक संवेदनायें प्रगट कर श्रद्धांजलि अर्पित की।

अंत में आपकी धार्मिकता, सामाजिकता, विद्वत्ता, सरलता, सौम्यता एवं श्री देव-शास्त्र-गुरु के प्रति अटूट श्रद्धा जनमानस को नई दिशा प्रदान कर प्रकाशस्तम्भ का कार्य करती रहेगी।

पारस जैन, शांति सदन, सिवनी (म.प्र.)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री वर्णी दिगम्बर जैन गुरुकुल, पिसनहारी की मढ़िया, जबलपुर (म.प्र.)

ब्र. जिनेशकुमार, अधिष्ठाता

महान शिक्षाविद् महासन्त प्रातः स्मरणीय 105 क्षुल्लक श्री गणेशप्रसाद जी वर्णी ने अपने जीवनकाल में देश में अनेक शिक्षण संस्थाओं का शुभारंभ कराया। उनका मानना था कि देश की प्रगति शिक्षा से ही संभव है। इसी कड़ी में महाकौशल क्षेत्र की संस्कारधानी जबलपुर में आध्यात्मिक शिक्षा के प्रचार-प्रसार हेतु सन् 1946 में उन्होंने पिसनहारी मढ़िया क्षेत्र में गुरुकुल की स्थापना की। प्रारंभ में श्री वर्णी जी स्वयं इसके अधिष्ठाता रहे। उसके पश्चात् श्री पं. देवकीनन्दन जी, पं. जनन्मोहनलाल जी शास्त्री एवं पं. मोहनलाल जी शास्त्री आदि श्रेष्ठतम विद्वान् यहाँ के अधिष्ठाता रहे। सुप्रसिद्ध साहित्यमनीषी डॉ. पं. पन्नालाल जी साहित्याचार्य सन् 1986 से फरवरी 2001 तक यहाँ के अधिष्ठाता रहे। उनके समाधिस्थ होने के उपरान्त इस परंपरा का संचालन प्रतिष्ठाचार्य ब्र. जिनेश कुमार जी कर रहे हैं। इस तरह देश के ख्यातिप्राप्त शिक्षकों की सेवाएँ इस गुरुकुल को मिली। प्रारंभ से यहाँ विद्यार्थियों को धार्मिक शिक्षा के साथ लौकिक शिक्षा भी दी जाती है।

सन् 1986 में आचार्य श्री 108 विद्यासागर जी महाराज के आशीष से गुरुकुल को नई चेतना प्राप्त हुई, जब यहाँ ब्रह्मचारी भाइयों को आवासित कराकर धार्मिक शिक्षा प्रदान की जाने लगी। यहाँ के ब्रह्मचारीगण विशारद्, शास्त्री, सिद्धान्तरत्न व आचार्य परीक्षा उत्तीर्ण कर सारे देश में विद्वत्ता का प्रकाश बिखेर रहे हैं।

शिक्षा के विस्तार की शृंखला में सन् 1999 में जबलपुर के समीपवर्ती क्षेत्रों के प्रतिभावान् छात्रों को धार्मिक संस्कारों के साथ शिक्षा की बेहतर सुविधा उपलब्ध कराने के लिए गुरुकुल भवन में ही एक वृहद् छात्रावास प्रारंभ किया गया। जहाँ छात्रों को आवास, भोजन, औषधि व शिक्षा आदि की समुचित सुविधा प्रदान की जाती है तथा छात्र लौकिक शिक्षा के साथ-साथ धार्मिक, नैतिक शिक्षा भी ग्रहण करते हैं। इसके साथ ही व्यावसायिक क्षेत्र में कम्प्यूटर एवं अन्य विधाओं की शिक्षा भी दी जाती है।

इसी कड़ी में जुलाई 2000 से गुरुकुल परिसर में श्री वर्णी दिगम्बर जैन गुरुकुल उच्चतर माध्यमिक शाला एवं शिशुओं के लिए अंग्रेजी माध्यम का शिशु-मंदिर प्रारंभ किया गया है। वर्तमान में यहाँ लगभग 15 ब्रह्मचारी भाई एवं लगभग 100 छात्र आवासित होकर शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं।

जैनसाहित्य के प्रचार-प्रसार की दृष्टि से सन् 1997 में यहाँ एक विशाल साहित्यकेन्द्र की स्थापना की गई, जहाँ देश भर से प्रकाशित प्राचीन व नवीन सभी प्रकार का श्रेष्ठतम जैन-साहित्य सुगमता से उपलब्ध कराया जाता है। स्व. डॉ. पं. पन्नालाल जी साहित्याचार्य की स्मृति में पुस्तकालय का शुभारंभ भी किया गया है।

यह उल्लेखनीय है कि इस गुरुकुल में साधु सन्तों के आवागमन/चातुर्मास आदि समय-समय पर हुआ करते हैं। इन पावन प्रसंगों पर जैन आगमवाचनाएँ और शिक्षणशिविर आदि संचालित हुआ करते हैं।

संतशिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज का विशाल संघ के साथ चातुर्मास सन् 1984 व 1988 में गुरुकुल परिसर में संपन्न हुए। आचार्य श्री विद्यासागर जी के सान्निध्य में ही सन् 1981 व 1988 में गौरवशाली विशाल सिद्धान्त वाचना शिविर आयोजित हुए। आचार्यश्री के प्रभावक शिष्य श्री 105 क्षु. ध्यानसागर जी के सान्निध्य व गुरुकुल के अधिष्ठाता डॉ. पं. पन्नालाल जी के कुलपतित्व में सन् 1993 से 1997 तक लगातार पाँच वर्ष क्रमशः गोलबाजार जबलपुर, कटनी, नागपुर व छिन्दवाड़ा में ग्रीष्मकालीन वाचनाएँ संपन्न हुई। गौरव का विषय है कि यहाँ से शिक्षा प्राप्त कर अनेक ब्रह्मचारी भाई मुनि, ऐलक, क्षुल्लक पद को धारण कर आत्म-कल्याण के मार्ग पर अग्रसर हुए। यहाँ के पूर्व ब्रह्मचारी भाई शिक्षोपरांत देश में अनेक जगहों पर धार्मिकशिक्षण-संस्थाओं का संचालन भी कर रहे हैं। इसी क्रम में ब्र. विनोद जैन (भिंड) द्वारा जैन विषयों पर शोध करनेवाले छात्रों को मार्गदर्शन तथा अनुभवी विशेषज्ञों द्वारा योग व ध्यान का प्रशिक्षण दिया जाता है।

भविष्य को दृष्टिगत रखते हुए जबलपुर के ही उपनगर धनवन्तरि नगर में एक विशाल भूखंड पर आधुनिक अंग्रेजी-माध्यम का स्कूल प्रारंभ करने जा रहे हैं। जिसमें कक्षा नर्सरी से 12वीं तक के छात्र सौम्य एवं शांत वातावरण में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लौकिक शिक्षा के साथ ही अध्यात्म एवं धर्म की शिक्षा भी ग्रहण करेंगे। इसके साथ ही छात्रों को छात्रावास की समुचित सुविधा उपलब्ध होगी।

इस प्रकार ब्रह्मचारी-भाईयों व छात्रों की उत्तरोत्तर प्रगति के लिये हम निरंतर संकल्पित हैं। हमारे इस कार्य में आप तन-मन-धन से भरपूर सहयोग देकर देश, धर्म और समाज के हित में सहभागी बनें।

संचालित पाठ्यक्रम

ब्रह्मचारी वर्ग

1. कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ इन्दौर द्वारा संचालित विशारद, शास्त्री व सिद्धान्तरत्न परीक्षा
2. अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा (म.प्र.) द्वारा जैनदर्शन में शास्त्री की परीक्षा, जो स्नातक के समकक्ष है।
3. संपूर्णानंद विश्वविद्यालय वाराणसी द्वारा जैन-दर्शनाचार्य परीक्षा।

छात्रवर्ग

माध्यमिक शिक्षा मंडल, भोपाल द्वारा संचालित-

कक्षा 9, 10, 11 व 12वीं की परीक्षाएँ (हिन्दी माध्यम) **सभी संकाय**

कक्षा 6वीं से 8वीं हिन्दी/अंग्रेजी माध्यम

शिशु वर्ग (अंग्रेजी माध्यम) नर्सरी, के.जी. 1 व 2, कक्षा 1 से 5 वीं तक

भोपाल नगर में शिविर सम्पन्न

श्री दिगम्बर जैन श्रमण संस्कृति संस्थान, सांगानेर (जयपुर) द्वारा संचालित आ. ज्ञानसागर छात्रावास के द्वारा दीपावली अवकाश में दिगम्बर जैन मंदिर टी.टी. नगर भोपाल में आध्यात्मिक शिविर आयोजित किया गया। जिसमें परमपूज्य आ.श्री 108 विद्यासागर जी महाराज के सुयोग्य शिष्य मुनि श्री 108 आर्जवसागर जी महाराज का ससंघ मंगल सान्निध्य रहा। इसमें संस्थान के अधिष्ठाता श्री पं. रतनलाल बैनाड़ा जी का पावन निर्देशन शिविर की सफलता में कार्यकारी रहा। इस शिविर में तत्त्वार्थसूत्र, छहढ़ाला, बालबोध, इष्टोपदेश आदि ग्रन्थों का अध्यापन पं. मनोज शास्त्री 'भगवां', पं. आनन्द जी बनारस, पं. पुलक जी कटनी, पं. सोनल जी एवं पं. अभिषेक जी के द्वारा कराया गया। मुनिश्री के मंगल सान्निध्य के प्रभाव से लोगों ने इसमें बढ़चढ़कर भाग लिया।

पं. मनोज शास्त्री 'भगवां'

जैन कोचिंग

हमारे यहाँ शुद्ध शाकाहारी भोजन के साथ-साथ संस्कारित वातावरण का माहौल सदा बना रहता है। जैन समाज की छात्राओं हेतु इस छोटे से हॉस्टल का निर्माण किया गया है, वर्तमान में 8 छात्राएँ कोचिंग ले रही हैं।

''पावनछाया''
श्रीमती क्षमा जैन
243, यादव कालोनी, जबलपुर (मध्यप्रदेश)

अहिंसा इन्टरनेशनल द्वारा वर्ष 2004 के निम्न पुरस्कारों के लिए प्रस्ताव आमंत्रित हैं

1. अहिंसा इन्टरनेशनल डिप्टीमल आदीश्वरलाल जैन साहित्य पुरस्कार (राशि 31,000/-) जैन साहित्य के विद्वान् को उनके हिन्दी एवं अंग्रेजी के समग्र साहित्य अथवा एक कृति की श्रेष्ठता के आधार पर।

लिखित पुस्तकों की सूची तथा 2 श्रेष्ठ पुस्तकें भेजें।

2. अहिंसा इन्टरनेशनल भगवानदास शोभालाल जैन शाकाहार तथा जीवदया एवं रक्षा पुरस्कार (राशि 21,000/-)
3. अहिंसा इन्टरनेशनल प्रेमचन्द जैन पत्रकारिता पुरस्कार (राशि 21,000/-) रचनात्मक जैन पत्रकारिता की श्रेष्ठता के आधार पर।

नाम, सुझाव स्वयं लेखक/कार्यकर्ता/संस्था अथवा अन्य व्यक्ति 30 जनवरी, 2005 तक निम्न पते पर लेखक/कार्यकर्ता/पत्रकार के पूरे नाम व पते, जीवन परिचय संबंधित क्षेत्र में कार्य-विवरण सहित व पासपोर्ट आकार के 2 फोटो सहित आमंत्रित हैं। पुरस्कार नई दिल्ली में लगभग अप्रैल 2005 में भव्य समारोह में भेंट किये जायेंगे।

सतीश कुमार जैन, महासचिव
सी-III/3129, बसंत कुंज, नई दिल्ली- 110070
फोन 011-26122843

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुण्डलपुर, दमोह (म.प्र.) को रेललाइन से जोड़ने के लिए अनुरोध

रेल मन्त्रालय, रेल भवन रफी मार्ग, नई दिल्ली 110001 के द्वारा पश्चिम-मध्य रेल्वे जोन मुख्यालय जबलपुर, मध्यप्रदेश के अन्तर्गत जबलपुर से पन्ना हेतु व्हाया दमोह नई रेललाइन का सर्वे 2000-2001 में किया गया है। इसमें रेललाइन सिद्धक्षेत्र कुण्डलपुर (दमोह) से कुछ किलोमीटर दूर से गुजरेगी। पाठकों से अपेक्षा की जाती है कि वो माननीय रेलमन्त्री श्री लालूप्रसाद यादव, रेल राज्यमंत्री द्वय श्री आर. वेलू एवं श्री नायमन भाई राठना, चेयरमेन रेल्वे बोर्ड श्री आर.के. सिंह, सदस्य- रेल्वे बोर्ड (इंजीनियरिंग), श्री एस.पी. एस. जैन एवं श्री सुधीर जैन (आई.ए.एस.)-ओ.एस.डी. रेल मंत्री को रेल मंत्रालय के उपर्युक्त नई दिल्ली के पतों पर तथा श्री दीपक गुप्ता-महाप्रबन्धक, श्री ए.के. जैन उप महाप्रबन्धक, श्री व्ही.के. जैन- चीफ वर्कशॉप ऑफीसर पश्चिम- मध्यरेल्वे जोन, इन्दिरा मार्केट, जबलपुर के पतों पर अधोलिखित मैटरों को व्यक्तिगत, संस्थागत, सामाजिक एवं राजनैतिक संस्थाओं के लैटरपेड पर प्रस्ताव बनाकर प्रेषित करें/ कराएँ साथ ही स्थानीय विधायक, मंत्री, सांसदों से भी इस विषय में अनुमोदनार्थ पत्र प्राप्तकर उक्त सभी को प्रेषित करें, ताकि बुन्देलखण्ड के इस लोकप्रसिद्ध जैन तीर्थक्षेत्र को रेल्वे के मानचित्र पर जोड़ा जा सके और देश-विदेश से क्षेत्र की यात्रा हेतु आनेवाले यात्रीगणों को आवागमन में सुविधा उपलब्ध हो सके।

इसी प्रकार, जबलपुर से कोटा जानेवाली एक्सप्रेस ट्रेन का नामकरण 'दयोदय एक्सप्रेस' किया जाए, इस हेतु भी उक्त सभी मंत्रीगण एवं रेलवे अधिकारियों को प्रस्ताव बनाकर प्रेषित किए/कराए जा सकते हैं। साथ ही स्थानीय सांसद, विधायकों, मंत्रियों एवं राजनैतिक दलों के प्रमुखजनों से भी सम्मति प्राप्तकर उक्त सभी को प्रेषित कराएँ, ताकि 'अहिंसा परमो धर्म:' का सन्देश जनसामान्य तक सहज ही पहुँच सके। **सम्पादक**

प्रति,

आदरणीय श्री लालूप्रसाद यादव जी

रेल मंत्री, रेल मंत्रालय,

रेल भवन, रफी मार्ग

नई दिल्ली - 110001

विषय- जैनक्षेत्र कुण्डलपुर, जिला दमोह (मध्यप्रदेश) को रेल लाइन से जोड़े जाने बाबद।

मान्यवर,

आपके कार्यकाल में भारतीय रेल्वे प्रगति के सोपानों पर बढ़ता हुआ अधिक सुविधायुक्त उपक्रम बन गया है। भारतवर्ष की एकअरब से भी अधिक की आबादी आपकी कार्यक्षमता एवं दूरदर्शिता से परिचित है। भारतीय रेलवे उपभोक्ताओं को निश्चिंतता से परिपूर्ण आरामदायक यात्रा प्रदानकरने में सफल रहा है। भारत का प्रत्येक रेल्वेस्टेशन पहले से अधिक साफसुथरा दिखायी देने लगा है। लोग रेल में यात्रा करना अधिक पसंद करने लगे हैं। आरामदायक यात्रा के लिए भारतीय रेल पहचानी जाने लगी है। यात्रा के समय सुरक्षा एवं भयरहित यात्रा भारतीयरेल्वे की पहचान में नया प्रतिमान स्थापित करने जा रही है। रेल्वेउपक्रम वर्तमान समय में उपलब्धियों से सराबोर है। इन उपलब्धियों का श्रेय आपके कार्यकाल को ही जाता है।

मध्यप्रदेश के दमोह जिले की पटेरा तहसील के अंतर्गत श्री दिगम्बर जैन अतिशय सिद्धक्षेत्र तीर्थस्थल 'कुण्डलपुर' स्थित है। इस अतिशयकारी तीर्थस्थल के मूलनायक भगवान 'बड़े बाबा' के नाम से देश-विदेश में विख्यात हैं। प्रतिदिन इस तीर्थस्थल पर हजारों की संख्या में पहुँचनेवाले श्रद्धालुओं के वार्षिक आँकड़ों का अनुमान लाखों में होता है। इस तीर्थस्थल का पहुँचमार्ग अत्यंत दु:खद है। इतनी असुविधा के बाद भी लाखों श्रद्धालुओं की उपस्थिति इस तीर्थ के प्रति अत्यंत श्रद्धा का प्रतीक है। श्री दिगम्बर जैन तीर्थस्थल 'कुण्डलपुर' भारतीय रेल्वे के मानचित्र से अभी भी अछूता है। भारत के एककरोड़ जैनों के लिए विशेष श्रद्धास्थली यह तीर्थ रेल्वे के मानचित्र से जोड़ेजाने का इंतजार कर रहा है। जैन समुदाय आपसे आग्रहपूर्वक निवेदन करता है कि इस ओर ध्यान देकर इस तीर्थस्थल को रेल्वे के मानचित्र पर लाने का अनुग्रह करें, जिससे इस तीर्थस्थल पर रेलों की आवाजाही प्रारंभ हो सके एवं भारत की एककरोड़ की जैनआबादी इसका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लाभ उठा सके। वर्तमान में 'कुण्डलपुर' तीर्थस्थल जाने के लिए यात्रियों को दमोह से बस के द्वारा लगभग 35-40 किलोमीटर की यात्रा करनी पड़ती है। ज्ञात जानकारी के अनुसार पश्चिम- मध्य रेल जोन के अंतर्गत जबलपुर से पन्ना, व्हाया दमोह होकर नई रेललाइन का 2000-01 में सर्वे कार्य संपन्न हुआ है। Reconnaissance Engineering-cum-Traffic Survey के रूप में 1676 एम.एम. वाली एवं 'ई' स्टेण्डर्ड कन्सट्रक्शन वाली 246.350 कुल लम्बाई युक्त, टोपो शीट नं. 55 एम/5, 55 एम/9, 54 पी/12 में हुए सर्वे के अनुसार दमोह से पन्ना रेललाइन चंदौरा, बिलाई, लुहरी एवं हटा होते हुए आगे जाएगी। यह लाइन कुण्डलपुर तीर्थ से चंद किलोमीटर दूर से होकर गुजरेगी। अत: आपसे करबद्ध निवेदन है कि इसका पुन: सर्वे कराकर इस लाइन को दमोह से कुण्डलपुर होते हुए निकाला जाए, जिससे तीर्थयात्रियों को रेलसुविधा उपलब्ध हो सके। इससे पटेरा तहसील के निवासियों को भी लाभ प्राप्त होगा एवं रेल्वे के यात्रियों की संख्या में वृद्धि होगी, जिससे निश्चितरूप से रेल्वे की आय में बढ़ोत्तरी होगी।

अत:, भारतवर्ष की एककरोड़ की जैनआबादी आपसे निवेदन करती है कि इस कार्य को शीघ्रतातिशीघ्र पूर्णकर अनुग्रहीत करें। आपके द्वारा इस विषय में की गई कार्रवाई की एक प्रति हमें भी उपलब्ध हो, ऐसी अपेक्षा है।

धन्यवाद।

आपका ही

जबलपुर-कोटा एक्सप्रेस का नाम दयोदय एक्सप्रेस हो

प्रति,

माननीय श्री लालूप्रसाद यादव जी

केन्द्रीय रेलमन्त्री

रेल मन्त्रालय, रेल भवन, नई दिल्ली- 110001

विषय- 1469-1470, जबलपुर-कोटा एक्सप्रेस का नाम 'दयोदय एक्सप्रेस' रखने एवं उसे कोटा से आगे जयपुर तक बढ़ाए जाने बावत्।

मान्यवर,

भारतीयजनता को अधिक सुविधायुक्त एवं आरामदायक सेवा प्रदान करने के लिए भारतीय रेल निरन्तर प्रयासरत है। जबलपुर (म.प्र.) से-कोटा (राजस्थान) के बीच प्रतिदिन 1469-1470 एक्सप्रेस-ट्रेन सेवारत है। यह ट्रेन जबलपुर-कटनी-दमोह-सागर-बीना-गुना-रुठियाई-बारां-कोटा के निवासियों को रेल-सुविधा प्रदान कर रही है।

मध्यभारत में जीवदया के मसीहा आचार्य श्री 108 विद्यासागरजी महाराज अपने करोड़ों अनुयायियों को गौ-रक्षा, जीव-कल्याण, पर्यावरण-संरक्षण के लिए प्रेरित कर रहे हैं। इसके फलस्वरूप उनकी प्रेरणा से मध्यभारत में 100 से अधिक गौशालाएँ ज़ीव-रक्षा के उद्देश्य को लेकर संचालित की जा रही हैं। इन गौशालाओं को 'दयोदय' के नाम से पहचाना जा रहा है। 'दयोदय' यानी जो अपने अन्दर 'दया का उदय'-प्राणिमात्र के कल्याण की कामना शाब्दिक अर्थ को समाहित किए हुए है। इस अंचल में 'दयोदय' शब्द वर्तमान में गायों एवं मूक-पशुओं के प्रति दया के भाव का परिचायक/पहचान बन गया है। 'दयोदय' पशु संवर्धन एवं पर्यावरण केन्द्र के नाम से एक वृहद् गौशाला संचालित है तथा जबलपुर से कोटा मार्ग के अनेक ग्राम-नगरों में भी 'दयोदय' नाम से गौशालाएँ संचालित हो रही हैं।

इन सभी तथ्यों को ध्यान में रखते हुए आपसे निवेदन है कि भारत की अहिंसा-प्रधान संस्कृति को एक और नया आयाम प्रदान करते हुए 1469-70 जबलपुर-कोटा एक्सप्रेस का नाम 'दयोदय एक्सप्रेस' रखने का कष्ट करें।

इसी के साथ यह भी निवेदन है कि इस ट्रेन को, जो अभी जबलपुर से कोटा तक संचालित हो रही है, आगे जयपुर (राजस्थान) तक बढ़ाया जाए। इस संबंध में आपके द्वारा की गई कार्रवाई की एक प्रति हमें भी उपलब्ध हो सके, ऐसी आपसे अपेक्षा है।

धन्यवाद।

भवदीय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समाचार

मुनि श्री आर्जवसागर जी के भोपाल चातुर्मास 2004 की उपलब्धियाँ

परमपूज्य आचार्य श्री 108 विद्यासागर जी महाराज के तपोनिष्ठ, आगमज्ञ शिष्य पूज्य मुनि श्री 108 आर्जव सागर जी महाराज, पूज्य क्षुल्लक श्री 105 अर्पण सागर जी एवं बालब्रह्मचारी श्री शान्त कुमार भैयाजी का वर्ष 2004 का पावन वर्षायोग श्री दिगम्बर जैन मंदिर टी.टी. नगर में सानन्द सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर रत्नकरण्डक श्रावकाचार वारसाणुवेक्खा, तीर्थोदय काव्य, सर्वार्थसिद्धि, एवं गोम्मटसार का स्वाध्याय प्रवचन प्रतिदिन हुआ। प्रत्येक रविवार को जिनागमसंगोष्ठी एवं महाराजश्री के विशेष प्रवचन आयोजित किये गये, जिसका लाभ सम्पूर्ण भोपाल नगर के धर्मप्रेमी बन्धुओं को मिला। दिनांक 29 अगस्त से 29 सितम्बर तक षोडसकारण-पर्व स्थानीय एवं तमिलनाडु आदि विभिन्न स्थानों से पधारे श्रावकों ने उपवास, एकाशन अथवा एक दिन उपवास, एक दिन एकाशन के साथ सम्पन्न किया व मंदिर प्रांगण में ही निवास कर व्रती-जीवन जीने का अभ्यास किया। इसी मध्य 18 सितम्बर से 27 सितम्बर तक दस लक्षण पर्व एवं रत्नत्रय व्रत के साथ 29 सितम्बर को क्षमावाणी पर्व का आयोजन भी किया गया। पर्यूषण पर्व में प्रतिदिन रात्रि में समाज को विद्वान पंडित डॉ. (प्रो.) रतनचन्द्र जी के प्रवचनों का लाभ प्राप्त हुआ।

2 अक्टूबर 2004 का वह विशेष दिन था जब विभिन्न विद्यालयों से आये छात्र-छात्राओं की अनुशासनबद्ध तरीके से सुन्दर, आकर्षक गणवेश में अहिंसा-रैली निकाली गई व मध्यान्ह शाकाहार सम्मेलन का आयोजन हुआ, जिसमें बड़ी संख्या में धर्म-प्रेमी बन्धुओं ने भाग लिया। सभा की अध्यक्षता माननीय श्री उमाशंकर जी गुप्ता, परिवहन मंत्री, मध्यप्रदेश शासन ने की तथा माननीय श्री बाबूलाल जी गौर, मुख्यमंत्री, मध्यप्रदेश शासन इस सभा में मुख्य अतिथि के रूप में पधारे। श्री हुकुमचंद जी सांवला, विश्व हिन्दू परिषद के केन्द्रीय मंत्री सभा में विशिष्ट अतिथि थे।

माननीय मुख्यमंत्री जी ने महाराज श्री द्वारा रचित ''तीर्थोदय काव्य'' पुस्तक का भी विमोचन किया गया। दिनांक 3 अक्टूबर को अखिल-भारतीय कवि-सम्मेलन का आयोजन था, जिसमें भोपाल के प्रसिद्ध कवि श्री चन्द्रसेन जी के अतिरिक्त बाहर से पधारे कई प्रमुख कवियों ने अपना कविता-पाठ किया। सम्मेलन में महाराजश्री ने भी अपनी कविताओं को पढ़ा।

दिनांक 21 अक्टूबर से 31 अक्टूबर तक पं. रतनलाल जी बैनाड़ा के निदेशन में सर्वोदय विद्या संस्कार शिक्षण शिविर का आयोजन किया गया। शिविर में बाल-बोध द्रव्यसंग्रह, तत्त्वार्थ सूत्र एवं ईष्टोपदेश की कक्षाएँ लगाई गई, जिसमें सभी उम्र के व्यक्तियों ने भाग लेकर अध्ययन किया एवं परीक्षा में उत्तीर्ण होकर प्रमाण-पत्र प्राप्त किये।

दिनांक 6 एवं 7 नवम्बर को वर्तमान परिप्रेक्ष्य में ''षोडशकारण भावनाओं का व्यवहारिक रूप एवं वैज्ञानिक दृष्टि'' विषय पर द्वि-दिवसीय अखिल-भारतीय विद्वत् संगोष्ठी का गरिमापूर्ण आयोजन किया गया जिसमें देश के लब्ध-प्रतिष्ठ अनेक विद्वानों ने भाग लिया। संगोष्ठी में डॉ. श्रेयांस कुमार जैन बड़ौत ने मोक्षमार्ग में साधर्मी-वात्सल्य की प्रधानता', डॉ. श्री जयकुमार जैन मुजफ्फरनगर ने 'श्रावकाचार में सल्लेखना का स्वरूप', डॉ. एल. सी. जैन जबलपुर ने 'जैनागम में जगत का स्वरूप',डॉ. देव कुमार जैन प्रसिद्ध वैज्ञानिक दिगी ने 'अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग में विज्ञानिक चिन्तन', डॉ. रतनचन्द्र जैन भोपाल ने 'सोलह कारण भावानाओं में दर्शन-विशुद्धि भावना', डॉ. धीरेन्द्रपाल सिंह कुलपति हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय सागर ने 'जैन दर्शन में विनय सम्पन्नता', श्रीपाल जैन 'दिवा' भोपाल ने 'तीर्थोदय काव्य में विनय-सम्पन्नता', श्री सुरेश जैन, आइ. ए. एस. ने 'षोडशकारण भावनाओं का लौकिक जीवन के विकास में योगदान', श्री निरंजनलाल जी बैनाड़ा आगरा ने ' दर्शन-विशुद्धि भावना का विवेचन कारणानुयोग एवं द्रव्यानुयोग के आधार पर', श्री शिखरचंद जैन सागर ने 'तीर्थंकर प्रकृति के बंध में अर्हत आदि 4 भक्तियों का योगदान', पं. भागचंद जी जैन 'इंदु' छतरपुर ने 'षोडशकारण भावनाओं में व्रत व शील का महत्व', श्री लालचंद जैन 'राकेश' गंजबासौदा ने 'तीर्थोदय काव्य' का कला पक्ष एवं भाव पक्ष', श्री सुधीर जैन भोपाल ने 'षोडशकारण भावनाओं में स्व-पर कल्याण की भावना का समावेश', श्री संजय कुमार जैन पथरिया ने 'षोडशकारण भावनाओं में शक्तितस्त्याग व तप भावना' एवं श्री जितेन्द्र जैन जबलपुर ने 'आवश्यकों की परिपूर्णता' पर अपने आलेखों का वाचन किया। श्री अजितकुमार पाटनी भोपाल ने, जिनके संयोजन में इस संगोष्ठी का एक सफल आयोजन हुआ, ''अर्हद्भक्ति-भावना में अर्हत् के 46 गुण व समवसरण का वर्णन''

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भावना में अर्हत् के 46 गुण व समवसरण का वर्णन'' विषय पर अपना आलेख पढ़ा तथा समव सरण की रचना का विस्तृत वर्णन उसके चित्र के आधार पर किया।

प्रत्येक सत्रांत में 108 मुनि श्री आर्जवसागर जी महाराज आलेखों पर समीक्षात्मक प्रवचन कर विषयवस्तु को और अधिक गरिमा प्रदान कर देते थे। संगोष्ठी के समापन के अवसर पर मुनि श्री आर्जव सागर जी महाराज द्वारा रचित ''तीर्थोदय काव्य'' पुस्तक के द्वितीय प्रकाशन का डॉ. राजेश जैन मंगलवारा भोपाल द्वारा विमोचित किया गया। महाराजश्री द्वारा रचित एक और पुस्तक ''नेक जीवन'' का विमोचन भी इन्हीं कार्यक्रमों के मध्य किया गया।

दिनांक 12 नवम्बर को प्रातः 108 भगवान महावीर स्वामी का मोक्षकल्याणक निर्वाणलाडू चढ़ाकर हर्षोल्लास के साथ मनाया गया तथा वर्षायोगनिष्ठापन कार्यक्रम भी सम्पन्न हुआ। दिनांक 14 नवम्बर रविवार को दोपहर में अपार जन-समूह के मध्य मुनि श्री आर्जवसागर जी महाराज एवं क्षुल्लक श्री अर्पण सागर जी महाराज की पिच्छिकापरिवर्तन का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ, जिसमें जितेन्द्र जैन, अनेकान्त जैन, मनोहरलाल जी टोंग्या, श्री अजित जैन, सुधीन जैन एवं अजीत पाटनी जी आदि अनेक लोगों ने ब्रह्मचर्य व्रत आदि नियमों के साथ पिच्छिकापरिवर्तन में भाग लिया।

अजित पाटनी, भोपाल

श्रमण संस्कृति संस्थान से दशलक्षण पर्व में अभूतपूर्व धर्मप्रभावना

श्री दिगम्बर जैन श्रमण संस्कृति संस्थान, सांगानेर जयपुर ने प्रतिवर्ष की भांति इस भी पर्वराज पर्यूषण में देश के 10 प्रांतों में 105 स्थानों एवं विदेश (कनाडा) में एक विद्वान् प्रवचन हेतु भेज कर अभूतपूर्व धर्म-प्रभावना की। जो इस प्रकार है

विदेश

कनाडा -पं. राकेश शास्त्री

महाराष्ट्र

बोरीबली, बम्बई-पं. प्रद्युम्न शास्त्री, भायंदर,दलाल स्ट्रीट, बम्बई- पं. मनोज शास्त्री भगवां, जलगाँव-पं. प्रतिश जी शास्त्री / पं. वैभव जैन व. उपा., अहमद नगर- पं. गगन शास्त्री, फलटन-पं. नीरज शास्त्री /पं. श्रीपाल जैन व. उपा., शेंदुर्णी- पं. सचिन शास्त्री, सेलू- पं. लवलेश शास्त्री/ पं. अमित जैन शास्त्री।

दिल्ली

पाण्डवनगर, (दिल्ली)-पं. मौसम शास्त्री खुरई, लक्ष्मीनगर, दिल्ली-पं. पुलक शास्त्री/पं. दीपक जैन व. उपा., रोहणी नगर, (दिल्ली)-पं. मनोज शास्त्री आहार जी।

हरियाणा

रेवाडी-पं.दिलीप शास्त्री,

पश्चिम बंगाल

जंगीपुर-पं. राहुल जैन शास्त्री

छत्तीसगढ़

बिलासपुर-पं. मनोज शास्त्री घुवारा

उत्तरप्रदेश

आगरा में कमलानगर-पं. अरविन्द शास्त्री रांची, शालीमार इन्क्लेब-पं. शैलेन्द्र शास्त्री भेलसी, जयपुर हाऊस-पं. शैलेन्द्र शास्त्री/पं. मनोज जैन व. उपा., राजामण्डी-पं. सुनील शास्त्री समनापुर,कानपुर-पं. सुधीरशास्त्री(बारामती), झांसी- पं. सोनेश शास्त्री/पं. विवेक जैन व. उपा., कन्नौज-पं.आनंद शास्त्री (बनारस), रानीपुर, (झांसी) - पं. अभिषेक शास्त्री/ पं. ललित जैन शास्त्री।

मध्यप्रदेश

बानापुरा (होशंगाबाद)-पं. सीतेश शास्त्री, ईसागढ़(गुना)-पं. अखिलेश शास्त्री/पं.जिनेश जैन शास्त्री, पलासिया (इंदौर)-पं. सौरभ शास्त्री/पं. पर्यूश जैन व. उपा., खरगोन-पं. राजेश शास्त्री भगवां, मोहना, (देवास)-पं. हेमन्त शास्त्री/ पं. अभिषेक जैन व. उपा., मोहन नगर वार्ड सागर पं. संजय शास्त्री भेलसी, दमोह-पं.अनुपम शास्त्री लिधौरा, बीना-पं. आलोक शास्त्री ललितपुर, बांसा तारखेडा (दमोह) - पं. विकास शास्त्री/पं. दीपक जैन व. उपा., ए.बी. रोड शिवपुरी पं. वीरेन्द्र शास्त्री हीरापुर, सदरबाजार शिवपुरी-पं. मयंक शास्त्री/पं.सौरभ जैन व. उपा., कंदेली (नरसिंहपुर)-पं. आलोक शास्त्री विरधा, करेली(नरसिंहपुर)-पं. अभिषेक शास्त्री ललितपुर/पं. राजीव जैन व. उपा., हाटपीपाल्या (देवास)- पं. नवनीत शास्त्री मुरैना, डबरा, (ग्वालियर)-पं. दीपेश शास्त्रीपरतापुर, शुजालपुर मण्डी(शाजापुर)-पं. विनीत शास्त्री/पं. शैलैन्द्र जैन व. उपा., महू(इंदौर)- पं. उमेश शास्त्री/पं. गौरव जैन व. उपा., फोपनार(बुरहानपुर)-पं. अंकित शास्त्री, गढ़ाकोटा (सागर)-पं. सौरभ शास्त्री पथरिया, पिपरई गाँव-पं. राहुल शास्त्री/पं. सुदीप जैन शास्त्री, बाकानेर(धार)-पं. सुनील

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शास्त्री/पं. अंकित शास्त्री, सिंगोली-ब्र. विनोद जैन, भाग्योदय (सागर) ब्र. रोहित जैन भाग्योदय (सागर)

गुजरात

ईसनपुरा, (अहमदाबाद) -पं. राजेश शास्त्री महावीर जी, शाहपुर (अहमदाबाद)-पं. दिनेश शास्त्री खेडली, भावनगर-पं. विनय शास्त्री/पं. ऋषभ जैन व. उपा., माडवी, सूरत- पं. शिखरचन्द्र जैन, सागर

राजस्थान

जोधपुर-पं.ज्योति बाबू शास्त्री, जवाहर नगर अजमेर-पं. वैभव शास्त्री झांसी, पार्श्वकालोनी, अजमेर-पं. दीपक शास्त्री करैरा, सरावगी मुहल्ला अजमेर- पं. रोहित शास्त्री/पं. अभिषेक शास्त्री, पंचशील अजमेर-पं. नीरज जैन बरायठा व. उपा., रैनवाल (किशनगढ़) -पं. सुनील शास्त्री आगरा, भरतपुर-पं.भरत शास्त्री रजवांस, केशवराय पाटन (बूंदी) -पं. माणिक चन्द जैन बांदीकुई, मन्नी का बड़ (अलवर) -पं. आनंद शास्त्री ललितपुर, रामगढ़ (अलवर) -पं. विक्रम शास्त्री/पं. भाविन शास्त्री, मोहन कालोनी(बांसवाडा)-पं. राजेश शास्त्री भगवां, सदरबाजार(बांसवाडा)- पं. प्रवीण शास्त्री भगवां, बागीदौरा, (बांसवाडा)-पं. अनुराग शास्त्री/पं. जी भरत जैन व. उपा., पालोदा (बांसवाड़ा)- पं. संजय शास्त्री, जौलाना(बांसवाड़ा)-पं. राजेश शास्त्री/पं. सौरभ जैन व. उपा., शीसवी(उदयपुर)-पं.कपिल शास्त्री, आर. के. कालोनी(भीलवाडा)-पं. सोनल शास्त्री दिगौडा, गुलाबपुरा(भीलवाडा)-पं. अरविन्द शास्त्री/पं. सोयल जैन व. उपा., सांगोद(कोटा)-पं. अभिषेक शास्त्री, महावीरनगर द्वितीय(कोटा)-पं.पवन शास्त्री/पं. सावन जैन व. उपा.,महावीरनगर विस्तारयोजना(कोटा)-पं. देवेन्द्र शास्त्री गुढ़ा/पं. मोहित जैन व. उपा., दूनी(टोंक)-पं. विनय शास्त्री/पं. महावीर शास्त्री, देवली(टोंक)-पं. सचिन शास्त्री/पं. अंकित शास्त्री, आवां(टोंक)-पं. ऋषभ कुमार जी कर्रापुर, झालावाड-पं. विपुल खोत शास्त्री/पं. पदमाकर खोत व. उपा., अलीगढ़-पं. आशीष शास्त्री/पं. अभिषेक जैन व. उपा., बेगू(चित्तोडगढ़)-पं. मोनू शास्त्री, दातारामगढ़-पं. राकेश शास्त्री/पं. मुकेश जैन व. उपा., काकरोली-पं. जयपाल शास्त्री/पं. उज्जवल शास्त्री, नैनवां-पं. जिग्नेश शास्त्री/पं. अंकेश शास्त्री, नयापुरा,-पं. हितेश शास्त्री/पं. आशीष जैन शास्त्री, मीठणी-ब्र. किरीट भैया, प्रतापगढ़-पं. जयकुमार जैन, सीकरी- पं. जितेन्द्र शास्त्री कोटा, भरतपुर- पं. भरत शास्त्री, जयपुर में कीर्तिनगर-श्रीमति पुष्पा बैनाड़ा आगरा, शास्त्रीनगर- पं. पवन जी जैन बांदीकुई, मालवीयनगर 3-पं. विकास शास्त्री बंडा, मालवीयनगर,10-पं. अनिल जैन, महावीरनगर-पं. अनंत बल्ले शास्त्री, सेठी कालोनी-पं. सुरेश शास्त्री, जनता कालोनी-पं. इन्द्रकुमार शास्त्री मुरैना, चित्रकूट कालोनी सांगानेर-श्रीमति शकुन्तला जैन कीर्तिनगर, महेश नगर- श्रीमति प्रतिभा जैन बसुन्धरा कालोनी, बरकतनगर- श्रीमति मंजू छाबडा लालकोठी, लालकोठी-पं. महेश शास्त्री बड़ामलहरा, शांतिनगर-पं. अभय शास्त्री, बड़ामलहरा हीरापथ (जयपुर) -पं.संदीप शास्त्री मानसरोवर, एस. एफ.एस. रजावत फार्म-पं. संदीप शास्त्री मानसरोवर, झोटवाड़ा-पं. संदीप शास्त्री, भगवां, सांगानेर-पं. रिखब गंगवाल गायत्रीनगर, जनकपुरी-पं. राजेश गंगवाल, गायत्रीनगर-पं. शिखरचन्द्र जी, इमली का फाटक।

पं. मनोज शास्त्री, भगवाँ

श्री वृहद् भक्तामर एवं सिद्धचक्र विधान

श्री दिगम्बर जैन महिला मण्डल के रजत जयन्ती समारोह के अवसर पर चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री 108 शान्तिसागर जी महाराज के पचासवें समाधि वर्ष के अन्तर्गत श्री सोनी जी की नसिया, अजमेर में प्रथम बार दिनांक 18 से 27 नवम्बर 2004 तक 'श्री वृहद् भक्तामर एवं सिद्धचक्र महामण्डल विधान व विश्वशांति महायज्ञ' का भव्यतापूर्वक आयोजन किया गया। महिला मण्डल की महामंत्री श्रीमती उर्मिला सोनी के अनुसार दिनांक 9 अगस्त 2004 से श्री भक्तामर स्त्रोत के सवा करोड़ जाप का लक्ष्य जैन समाज के सहयोग से 20 अक्टूबर तक कर लिया गया।

श्रीमती निर्मला पाटनी, अध्यक्षा

डॉ. चीरंजीलाल बगड़ा अ.भा. जैन पत्रकार संघ नई दिल्ली के राष्ट्रीय अध्यक्ष मनोनीत

जैन समाज के सभी घटकों के पत्रकारों का एक पंजीकृत संगठन है। अखिल भारतवर्षीय जैन पत्रकार संघ, नई दिल्ली, जिसका पाँचवाँ राष्ट्रीय अधिवेशन गत 24 अक्टूबर को गुजरात की औद्योगिक राजधानी सूरत में श्वेताम्बर जैनाचार्य राष्ट्रसंत कमल मुनि 'कमलेश' के सान्निध्य में भारी सफलता के साथ सम्पन्न हुआ। प्रसिद्ध शाकाहार विशेषज्ञ एवं प्रबुद्ध जैन पत्रकार डॉ चीरंजी लाल बगड़ा, सम्पादक दिशाबोध एवं राष्ट्रीय महामंत्री भारतीय अहिंसा संस्थान महासंघ कोलकाता ने दो सत्रों में चले इस महत्वपूर्ण अधिवेशन की अध्यक्षता की। विशेष अतिथि के रूप में सांसद श्री ललित भाई मेहता राजकोट एवं श्री दिलीप भाई गांधी (पूर्व केंद्रीय जहाजरानी मंत्री) उपस्थित थे।

अजित पाटनी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यशस्वी गुरु स्तुति

आर्यिका मृदुमति जी

कुन्द कुन्द भगवन्त सदृश तुम, परम्परा संवाहक हो।
त्याग तपस्या में तुम गुरुवर, सतयुग जैसे साधक हो॥
आगम अनुसारी तव चर्या, श्रमण संस्कृती कीरत हो।
गुरुवर विद्यासागर तुम तो, चलते फिरते तीरथ हो॥ 1॥

पिच्छीधारी दो सौ ऊपर, देश देश संचरण करें।
बाल ब्रह्मचारी सहसाधिक, पढ़े-लिखे तव शरण रहें॥
वर्ष सहस्त्रों के जाने पर, जो इतिहास न था भूपर।
वह अभिलेख बाल यतियों का, लिखा सूरि विद्यासागर॥ 2॥

प्रियधर्मी हो, दृढ़धर्मी हो, अवद्यभीरू यतिवर हो।
द्वादश अधिक शतक आर्यागण, कई संघ के गणधर हो॥
जैसे आगम में बतलाये, वैसे पाये हैं गुरुवर।
शिष्याओं का अनुग्रह करते, श्रेष्ठ सूरि विद्यासागर॥ 3॥

कर्तापन न रहे कार्य में, आत्मदृष्टि परिषह सहते।
संकेतों में शिक्षा देते, 'ऐसा करो' नहीं कहते॥
श्रुत गुरु के संकेत में चलकर, बने यशस्वी धरती पर।
कोटि-कोटि वन्दन स्वीकारो, ज्ञान शिष्य विद्यासागर॥ 4॥

विनय भाव से गुरु आज्ञा को, स्वयं पालते दिखते हैं।
गुरु भक्ति का दीप निरन्तर, पग-पग लेकर चलते हैं॥
धन्य! ज्ञानसागर गुरु भक्ति, धन्य बने गुरु से गुरुवर।
जुग जुग जीवो! इस धरती पर, मेरे गुरु विद्यासागर॥ 5॥

विद्याधर से विद्यासागर, बने सूरि विद्यासागर।
आज विश्व तव महिमा गाता, सूरी पद के हो आगर॥
ज्ञान सिन्धु से भरकर लाये, रत्नत्रय की तुम गागर।
ज्ञान रतन को लुटा रहे हो! जयवन्तो विद्यासागर॥ 6॥

सच्ची श्रद्धा ज्ञान चरण तप, वीर्याचार सुहाते हैं।
स्वयं चलें जिन पर गुरुवर, शिष्यों को तथा चलाते हैं॥
छत्तिस गुण से भरित रहे हो, दीक्षा शिक्षा गुण आगर।
चार संघ मणियों के नायक, जयवन्तो विद्यासागर॥ 7॥

गुरुजनों की विनय न भूलें, प्रेमभाव हो अनुजों में।
विस्मृत निज कर्तव्य न होवे, रहे एकता 'मृदु' मन में॥
यही गुरु का मंत्र कुशल-मंगल करता जीवे भूपर।
सुखी रहें सब, सुखी करें गुरु, मंगलमय विद्यासागर॥ 8॥

दोहा

सदा वज्र सम दृढ़वती निजव्रत पालन काज।
मृदुतम पर उपकार में कुसुम सदृश गुरु राज॥ 1॥

सूरिपदारोहण दिवस उत्सव हो जयवन्त !
'मृदुमति' मंगल भावना जुग जुग जीओ सन्त ॥ 2॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रजि नं. UP/HIN/29933/24/1/2001-TC

डाक पंजीयन क्र.-म.प्र./भोपाल/588/200

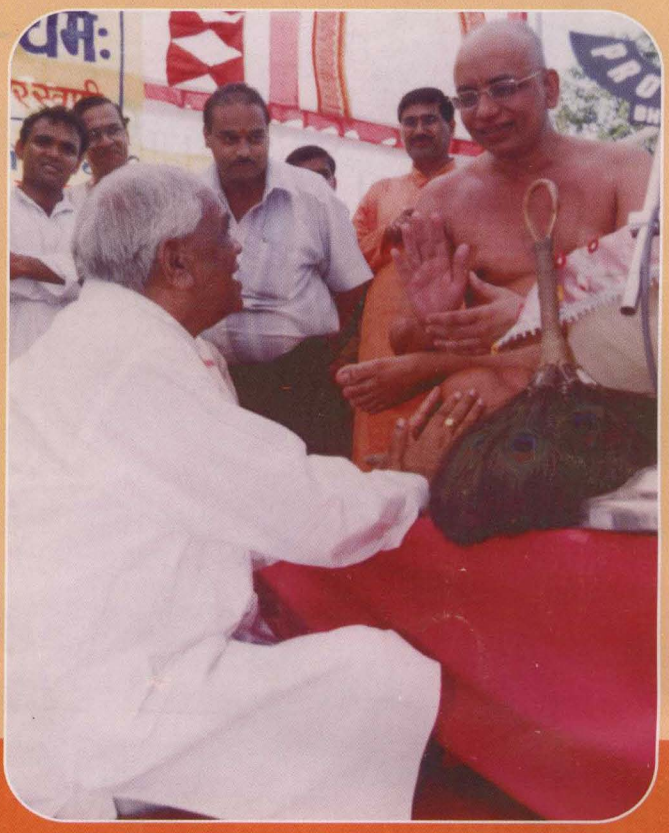

पूज्य मुनिश्री आर्जवसागर जी से आशीर्वाद ग्रहण करते हुए
श्री बाबूलाल जी गौर (मुख्यमंत्री मध्यप्रदेश शासन)

विद्धत्संगोष्ठी में समागत डॉ. धर्रिन्द्रपाल सिंह, कुलपति
डॉ. हरि सिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर, मुनिश्री आर्जवसागरजी से
प.पू. आचार्य विद्यासागर जी कृत महाकाव्य 'मूकमाटी' ग्रहण करते हुए

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक : रतनलाल बैनाड़ा द्वारा एकलव्य ऑफसेट सहकारी मुद्रणालय संस्था मर्यादित, जोन-1, महाराणा प्रताप नगर, भोपाल (म.प्र.) से मुद्रित एवं सर्वोदय जैन विद्यापीठ 1/205 प्रोफेसर कॉलोनी, आगरा-282002 (उ.प्र.) से प्रकाशित।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org